CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सोऽहं

बृहद् सामायिक पाठ और श्रावक प्रतिक्रमण

-: संकलन :-
गणिनी प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका रत्न श्री १०५
शुभमति माताजी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

। श्री वीतरागाय नमः ।

। सूरी आदि महावीर विमल सन्मति सुनील सागरेभ्यो नमः।

बृहद्
सामायिक पाठ
और
श्रावक प्रतिक्रमण

मूल उपदेश कर्ता

परम पूज्य १००८ श्री महावीर भगवान

तदुत्तर उपदेश कर्ता

परम पूज्य श्री गौतम गणधर देव (प्रथम गणधर)

प्रति उपदेश कर्ता

तपस्वी सम्राट् आ. श्री १०८ सन्मतिसागरजी महाराज

चतुर्थ पट्टाधीश आ. श्री. १०८ सुनिलसागरजी महाराज

संकलन कर्ता

गणिनी प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका रत्न श्री १०५

शुभमति माताजी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कृति - बृहद् सामायिक पाठ और श्रावक प्रतिक्रमण

पावन प्रसंग - परम पूज्य वात्सल्य रत्नाकर आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज के "१०० वें जन्मजयंती" के शुभ अवसर पर

संकलन - गणिनी आर्यिका रत्न श्री १०५ शुभमति माताजी (ससंघ)

प्राप्ति स्थान - श्री १००८ पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर, रोड़ नं. १६, जवाहर नगर, प्लाट नं. ३०८, गोरेगांव(वेस्ट), मुंबई.फोन:०२२-२८७३०२४९

सर्वाधिकार - सोऽहं फाउन्डेशन

मुद्रण -सोऽहं आर्ट प्रिन्टर्स,मो.-९२२३४९६८३०

संस्करण - सितम्बर २०१५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रतिक्रमण क्यों किया जाता है

श्री आचार्य अकलंक देव ने - राजवार्तिक ग्रंथ में प्रतिक्रमण के बारे में लिखा है - "मिथ्या दुष्कृताभीधानां वर्जित प्रतिक्रिया प्रतिक्रमण:" । कर्म के वश प्रमाद का उदय हो जाने पर कोई गलती का कारण बन बैठा वह मेरा खोटा कृत्य मिथ्या हो, यों कहकर प्रतिकार प्रगट कर देना प्रतिक्रमण है । प्रमाद जन्य दोषों से निवृत्त होकर आत्म स्वरूप में फिर से स्थित करने की क्रिया को प्रतिक्रमण कहते है ।

प्रतिक्रमण अर्थात् लौटना, रिटर्न, बँक, परमार्थ की तरफ, परमात्मा की ओर जाना, आक्रमण अथात् हमला करना, पदार्थ की ओर जाना, पर की तरफ जाना, और प्रतिक्रमण अर्थात् परमार्थ की तरफ जाना । प्रतिक्रमण का अर्थ है - परमात्मा की ओर जाना, प्रतिक्रमण का अर्थ है - अन्तर्मुखी होना, प्रतिक्रमण का अर्थ है - स्वयं के बोध का जागरण करना और अपने पापों को स्वीकार करना एवं पापों को प्रभु के सामने कहकर मन का मैल साफ कर अपने परिणामों में निर्मलता लाना ।

परम आराध्य भगवान महावीर ने आत्मसाधनों के लिए श्रावकों के लिए भी प्रतिक्रमण मय सूत्र दिये और प्रतिक्रमण के साथ प्रत्याख्यान एवं कायोत्सर्ग के सूत्र भी दिये । भविष्य में होनेवाले पापों से बचने के लिए किया जाता है वह प्रत्याख्यान है और आत्म निरीक्षण करने के लिए कायोत्सर्ग, ध्यान, सामायिक, आवश्यक हैं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

किसीके मन में प्रश्न आता है प्रतिक्रमण से क्या होता है ?

आत्म लाभ होता है, दोषों का भार हल्का होता है, आत्म उन्नति की ओर संलग्न होते है । वह जीव भविष्य में दोष नही कर पाता । यह प्रवृत्ति वात्सल्य और प्रभावना आदि सभी गुणों का बढ़ाता है । अतः प्रतिक्रमण से आत्मा को लाभ ही लाभ है । पापी का अंत करना सहज है, पाप का अंत करना कठिन है । इसलिए प्रमाद जन्य दोषों से निवृत्त होकर आत्म स्वरूप में फिर से स्थित करने की क्रिया को प्रतिक्रमण कहते है ।

प्रतिक्रमण आत्मसाधनाका और निर्वाण पदका मुख्य अंग माना गया है ।

अनादिकालसे यह जीव हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह इन पंच पापो में निमग्न हो रहा हैं, और इससे ही जन्म मरण के भयङ्कर दारुण दुःखोको उठा रहा है, प्रतिक्रमण करनेसे हिंसादि व्यापारोंसे ग्लानि, पापकर्मोंसे भय और अशुभ क्रियाओंसे विरक्त बुध्दि उत्पन्न होती है ।

प्रतिक्रमण करनेवाला भव्य जीव अपने प्रत्येक कार्यको विचारता है कि यह कार्य करने से मेरे पापाचरणोंकी वृद्धि होगी इसलिये मैं इसका त्याग करुं । मानसिक व्यापार व विकल्पोंसे भी वह भयभीत होता है । प्रतिक्रमण करनेवाला जीव पंचेन्द्रियोंके विषयोंसे विरक्त होता हैं, और ऐसे कार्य कलापोंका परित्याग करता है जो विषयोंके बढ़ानेवाले हैं । पापाचरण और विषयोंसे करनेसे व्यामोह बढ़ता है इसलिये आत्मबोध जागृत नहीं होता है । प्रतिक्रमण करनेपर पदार्थोंसे मोहका नाश होता है इसलिये स्वात्मबोधकी प्राप्ति होती है जिससे श्री अरहंत परमात्माकी भक्ति, रत्नत्रयकी पवित्र भावना और स्वात्म धर्ममें दृढता प्राप्त होती है । देह भोगादिकोंसे विरक्तता, कषायोंकी विजय, सुख और शांतिके मार्गका विकास होता है ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मन, वचन और शरीरके व्यापारोंका पुद्गल परमाणुओं पर गहरा असर पडता हैं । आत्मामें कषायोंकी सचिक्कणता होनेसे उन पुद्गल परिणामोंका आत्माके साथ घनिष्ठ संबंध हो जाता है और वही सम्बन्ध आत्गुणोंका सुख और शांतिका घात करता है, इसलिये कषायों पर विजय करना और मन वचन कायके, व्यापारोंको रोकना ही यथार्थ सुख और शांतिका मार्ग है, प्रतिक्रमण करनेसे कषायोंका विजय होता है, सुख और शांति के मार्ग का विकास होता है। इसलिये प्रतिक्रमण करना परमावश्यक है।

भोजनशुद्धि - मन शुद्धिका कारण है, इसलिये आहारपान शुद्धि, स्नानशुद्धि, वस्त्रशुद्धि, स्थानशुद्धि, जिनागमकी आज्ञानुसार विचारशुद्धि और वचनशुद्धि, रखनी चाहिये। अपने भावोंको विशुद्ध करने के लिये जो कुछ भलेबुरे काम किये हों उनका विचार (स्मरण) करना चाहिये। भविष्यमें ऐसे बुरे कार्य न हों ऐसी दृढ़ प्रतिज्ञा करना चाहिये। इस प्रतिज्ञाको दृढ़तर बनानेके लिए स्वात्मविश्वास पूर्वक वीतराग प्रभुके गुणोंकी भावना निरन्तर माननी चाहिये। अपने दुष्कृत्योंका निवेदन करना चाहिये। मनन करना चाहिये और परित्याग के लिये तत्पर रहना चाहिये। नैष्ठिक श्रावक और मुनियोंसे धर्मे की प्रभावना होती है होते हैं, उनके व्रतोमें अतिचार आदि दोषोंका उद्भव होना संभव है। इसलिये उनको अपने व्रतोंकी विशुद्धिके लिये प्रतिक्रमण करना चाहिये। पाक्षिक श्रावकोंकेव्रतमें अभ्यास मात्र ही होता है। अतएव व्रतोंको दृढ़ बनाने के लिये तथा दोषोके

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विचारके लिये प्रतिक्रमण करना नितांत आवश्यक है, एवं व्रतोकी भावना भी व्रतका एकदेश पालन करना है। प्रतिक्रमण करनेसे व्रतोकी (अहिंसा सत्य, अचौर्य ब्रह्मचर्य और परग्रिह त्याग) भावना पुष्ट होती है।

प्रतिक्रमण दैनिक, रात्रिक, पाक्षिक, चातुर्मासिक और सांवत्सरिक भेदोंसे अनेक प्रकार हैं। चातुर्मासिक और सांवत्सरिक भेदों के अनेक प्रकार है। चातुर्मासिक और सांवत्सरिक प्रतिक्रमणमें पूरी जाप्य १०८ देना चाहिये।

संघस्थ आर्यिका श्री स्वस्तिमति माताजी, आर्यिका श्री सुगंधमति माताजी, क्षुल्लिका श्री संभवमति माताजी जो मेरी सहयोगी है और जिन पुण्यशाली धर्मात्माओं ने इस **"बृहद् सामायिक एवं श्रावक प्रतिक्रमण"** के लिए दान देकर पुण्यार्जन किया है, उन सभी को और अनुमोदक श्री अजयजैन (अध्यक्ष), श्री राहुलजैन, डाँ. निर्मल गांधी एवं सभी भाई-बहन को मेरा आशीर्वाद।

-गणिनी आर्यिका शुभमति माताजी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रतिक्रमण करते समय इन बातोंका विशेष ध्यान रखना चाहिये-

(१) व्यापार, गृह और इष्टवियोग अनिष्ट संयोग संबन्धी आकुलताको छोड़ देना चाहिये।

(२) पुत्र, मित्र, भाई, बन्धु और कुटुम्ब परिवारोंकी चिन्ता छोड़कर प्रतिक्रमण करना चाहिये।

(३) मनको वशकर सावधानीसे प्रतिक्रमण करना चाहिये।

(४) उत्साह और प्रेमसे प्रतिक्रमण करना चाहिये। आलस्य और अनादर प्रतिक्रमणके घातक हैं।

(५) आसन ठीक लगाना चाहिये। परिग्रहका परिमाण करना चाहिये।

(६) कायोत्सर्ग-शरीरसे ममत्व त्याग करने के लिये उपसर्गोंको जीतनेका प्रयत्न और अभ्यास डालना चाहिये।

(७) णमोकार मंत्र, २७ श्वासोच्छ्वासमें जपना चाहिये। शीघ्रता, अस्थिरता और कायरताको दूर कर प्रतिक्रमण करना चाहिये।

(८) प्रतिक्रमण के लिये जिनमुद्रा (नासिका दृष्टि) का धारण करना और शांतिसे विषय कषायोंको जीतनेका विशेष उद्योग करते रहना चाहिये।

(९) प्रतिक्रमण पाठको और अर्थ को मनन करते हुये प्रतिक्रमण करना चाहिये।

(१०) समस्त जीवोंमें प्रेमभावना, गुणीजनोंमें भक्ति भावना, दुःखी (अज्ञान और कुचारित्रसे दुःखी) जीवोंमें करुणा भावना और मात्सर्य जीवोंमें साम्य भावना रखकर प्रतिक्रमण करना चाहिये।

(११) अपने दोषोंका बार बार विचार करना चाहिये।

(१२) जहां पर कायोत्सर्ग आवे वहां पर णमोकार मंत्रकी जाप्य ९ वार देना चाहिये परन्तु वीरभक्तिमें १८-२७-३६-१०८ आदिका क्रम जैसा प्रतिक्रमण करना हो देना चाहिये।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उपवासका पच्चखाण

इच्छेहमत्तपंचखखाणं सेअसणं वा, पाणं वा, खादं वा, सादं वा, चित्तं वा, वडुयं वा, अविलं वा, महुरं वा, लवणं वा, अलवणं वा, सचित्तं वा, अचित्तं वा, तं सव्वंचउव्विहं आहारं, अज्जपच्चवखणे, (पानी नहीं लेने वाले हो तब जलविना बोलना) जलंविना, कत्ले उपासे, परउग्गेदेसुरे पडिपुण्णें, पारणं करेज्ज। जदि अन्तरं कालं हवदि तदा अणसणं होज्ज। धम्मोतिकिच्चा। णियमोतिकिच्चा संजमोतिकिच्चा, तपोतिकिच्चा, अरहंतसक्खियं, सिद्धसक्खियं साहूसक्खियं, अप्पसक्खियं, परसक्खियं, देवताक्खियं दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ सुगहंमणं समाहिमरणं, जिनगुणसम्पत्ति होउ मज्झं, ते भवतु, तेमे भवतु, ।।१ ।।

पोसह (प्रोषधोपवास) करनेका पच्चखाण।

इच्छेह उत्तमं पोषहं, भव्यं साव्वज्ज जोगं पच्चक्खाणं, करेह सुत्तत्यं आचारं, धर्मज्झरणं, घरेह, पंचपरमेट्ठिसक्खियं ते मे भवतु।।

पोसह पाडनेका (पूर्ण करनेका) पच्चखाण ।

पारेमि पोसहं, अण्णाणेम वा, प्रमादेण वा, अमम्य भावेण वा, पोसहम्मि, जं किपि सुत्तत्थं आचारं, ण कयंतं, तस्म मिच्छामि दुक्कडम्।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विषय सूची

अ.नं.	विषय	पृष्ठ
१	प्रतिक्रमण क्यों किया जाता हैं	1
२	बृहद् सामायिक पाठ (अर्थ सहित)	8
३	लघु प्रतिक्रमण	56
४	बृहद् श्रावक प्रतिक्रमण (अर्थ सहित)	59
५	मिच्छामि दुक्कडम्	107
६	आलोचना पाठ	111
७	सामायिक पाठ (संस्कृत श्री अमितगति आ. कृत)	115
८	सामायिक पाठ - भाषा	125
९	वंदना जकड़ी (बिहारीकृत)	131
१०	श्री तीर्थ वंदना (बिहारीकृत)	135
११	मेरी भावना	139
१२	लघु सहस्त्र नाम स्तोत्र	142

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बृहत सामायिक पाठ

।। ॐ नमः सिद्धेभ्यः ३ ।।

ॐ जय, जय, जय, निःस्सही, निःस्सही, निःस्सही।

निःसगोऽहं जिनानां सदनमनुपमं त्रिःपरीत्येत्य भक्त्या।
स्थित्वा गत्वा निषद्योतच्चरणपरिणतोऽन्तः शनैर्हस्तयुग्मं।।
भाले संस्थाप्य बुद्धया मम दूरितहरं कीर्तये शक्रवंद्यं।
निंदादूरं सदाप्तं क्षयरहितममुं ज्ञानभानुं जिनेन्द्रम्।।

अर्थ - संग (परिग्रह) रहित ऐसा मैं भगवंतके मंदिर में जाकर तीन प्रदक्षिणा करके, भक्ति से खड़ा रहकर भीतर अच्छे परिणामों से निःस्सही का उच्चारण करके शनैः शनैः दो हाथ ललाट पर रखके मेरे पाप को हरनेवाले, इन्द्रको वंदन करने योग्य, निंदासे दूर रहनेवाले, सदा हितहारी, क्षय रहित और ज्ञानके सूर्यरुप ऐसे जिनेन्द्र भगवतं का मैं कीर्तन (स्तुति)करता हुँ।।१ ।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सामायिक विधि

सामायिक के पूर्व की जानेवाली चतुर्दिग्वंदना

पूर्व दिशा में-सर्व प्रथम नौ बार णमोकार मंत्र का जाप्य कर नमस्कार करते हुये-

प्राग्-दिग्-विदिगन्तरे, केवलि-जिन-सिद्ध-साधु-गण-देवा:
ये सर्वर्ध्दि-समृध्दा, योगि-गणाँस्तानहं वन्दे।।१।।

दक्षिण दिशा में नौ बार णमोकार मंत्र का जाप्यकर नमस्कार करते हुये-

दक्षिण-दिग्-विदिगन्तरे, केवलि-जिन-सिद्ध-साधु-गण-देवा:
ये सर्वर्ध्दि-समृध्दा, योगि-गणाँस्तानहं वन्दे।।२।।

पश्चिम दिशा में नौ बार णमोकार मंत्र का जाप्यकर नमस्कार करते हुये-

पश्चिम-दिग्-विदिगन्तरे, केवलि-जिन-सिद्ध-साधु-गण-देवा:
ये सर्वर्ध्दि-समृध्दा, योगि-गणाँस्तानहं वन्दे।।३।।

उत्तर दिशा में नौ बार णमोकार मंत्र का जाप्यकर नमस्कार करते हुये-

उत्तर-दिग्-विदिगन्तरे, केवलि-जिन-सिद्ध-साधु-गण-देवा:
ये सर्वर्ध्दि-समृध्दा, योगि-गणाँस्तानहं वन्दे।।४।।

पडिक्कमामि भंते! इरियावहियाए, विराहणाए अणागुत्ते अइगमणे णिग्गमणे ठाणेगमणे चङ्कमणे पाणुग्गमणे विज्जुग्गमणे हरिदुग्गमणे उच्चार पस्सवण खेल सिंहाण वियडिय पइट्ठावणियाए, जे जीवा एइंदिया वा, बेइंदिया वा, तेइंदिया वा, चउरिंदिया वा, पंचेंदिया वा, णोल्लिदा वा,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पेल्लिदा वा, संघट्टिदा वा, संघादिदा वा, उद्दाविदा वा, परिदाविदा वा, किरिंछिदा वा, लेस्सिदा वा, छिंदिदा वा, भिंदिदा वा, ठाणदो वा, ठाणचंकमणदो वा, तस्सउत्तरगुणं तस्स पायछित्त करणं तस्स विसोहिकरणं जाव अरहंताणं भयवंताणं णमोक्कारं पज्जुवासं करेमि तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

अर्थ - हे भगवन्! मैं प्रतिक्रमण करता हूँ, मार्ग में गमन है प्रधान जिसमें ऐसे जन्तुओंकी विराधनासे अनुपयोगमें, अतिशयसे गमन करनेमें, निकलनेमें मिथ्यात्वोके स्थानपर गमन करने में, प्राणीकों रोंदनेमें, बीजको रोंदनमें, नीलवर्णवाली ऐसी जो मूल स्कंधादि दश प्रकारकी वनस्पतिको पगसे रोंदने में, मलमूत्र करनेमें मुखका कफ तथा नासिका साफ करने में, विकृति करनेमें जो जीव, जिनके शरीररुप इंद्रिय एक हो, जिसको शरीर और मुख ये दो इंद्रिय हो, जिसके शरीर, मुख और नासिका ये तीन इंद्रिय हो, जिसके शरीर, मुख, नासिका और नेत्र ये चार इन्द्रिय हो, जिसके शरीर, मुख-नासिका, नेत्र और कान ये पांच इंद्रिय हो, प्रणोदित किये गये, इकठ्ठे किये गये, संघट्ट किये गये, उपद्रव किये गये, क्लेश किये गये, भूमिके साथ रोंदे गये, छेदे गये, भेदे गये, स्थानभ्रष्ट किये गये, एक स्थानसे दूसरे स्थान पर जाते हुये, उसके उत्तर गुणके लिये प्रायश्चित करने को, उसे ही शोधन करने को जहां तक अरिहंत भगवान के पंचपद रुपी जो णमोकार को मुख से उच्चारण करुं वहां तक पाप कर्म का, दृष्ट कर्मका त्याग करता हूँ।

(णमोकार मंत्र के जाप्य ९ उच्छ्वास २७)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ईर्यापथे प्रचलताद्य मया प्रमादा-
देकेन्द्रियप्रमुखजीवनिकायबाधा।।
निर्वर्तिता यदि भवेदयुगान्तरेक्षा।
मिथ्या तदस्तु दुरितं गुरुभक्तितो मे।।2।।

अर्थ - ईर्यापथके मार्गमें चलनेवाला ऐसा प्रमादसे एकेन्द्रिय आदि जीवो को मैंने कभी बाधा की हो अथवा दो हाथ प्रमाण अन्तरपर दृष्टि करके देखा न हो, तो उससे भी मेरा पाप हुआ हो वह गुरुकी भक्तिसे मिथ्या हो।

करचरणतनुविघाता दटतो विहित: प्रमादत: प्राणि
ईर्यापथामिति भित्या मुच्चे तद्दोषहान्यर्थं।।

अर्थ - हाथ, पांव और शरीरके विघात से चलते फिरते जंतुओंको प्रमाद से हरनेवाला ऐसा प्राणी भय से उसके दोषकी हानि के लिए ईर्यापथको छोड़ देता हैं।।३।।

इच्छामि भंते! आलोचेउं इरियावहियस्स पुव्वुत्तर दक्खिण पच्छिम चउदिस विदिसासु विहरमाणेण जुगंतर दिट्ठिणा भव्वेण दट्ठव्वा प्रमाद दोषेण, ड़वड़व चरियाए। पाणभूदजीव-सत्ताणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं।।

अर्थ - हे भदंत! मैं इच्छा करता हूँ ईर्यापथकी आलोचना करनेकी। पूर्व, उत्तर, दक्षिण और पश्चिम इन चार दिशाओमें, विदिशाओमें विहार करते, युगांतरसे दृष्टि करके देखने को पग-पगपर गमन में, प्रमाद दोषसे

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जीवोंको विषयमें जो उपघात दोष हुआ हो, किया हो, कराया हो, अनुमोदन किया हो वे मेरे दुष्कृत् मिथ्या हों।।३।।

न स्नेहाच्छरणं प्रयान्ति भगवन् पादद्वयं ते प्रजा:
हेतुस्तत्र विचित्रदु:खनिचय: संसारघोरार्णव:।
अत्यंत स्फुरदुग्ररश्मि निकर व्याकीर्ण भूमंडलो-
ग्रैष्म: कारयतींदु पाद सलिल च्छायानु रागं रवि:।

अर्थ - हे भगवन्! प्रजागण स्नेह से आपके चरणद्वयकी शरणमें नहीं आते लेकिन जो शरण में आते हैं उसका कारण विचित्र दु:खोंके समूहसे भरा हुआ संसाररुप घोर समुद्र ही है। जैसे अपने बहुत तीव्र किरणोंके समूहसे सम्पूर्ण पृथ्वी को प्रकाशित करनेवाला ऐसा ग्रीष्म ऋतुका सूर्य, चन्द्रके किरण, जल और छायाके उपर प्रीति उत्पन्न कराता हैं।।४।।

क्रुद्धाशी र्विषदुष्टदुर्जयविष ज्वालावलीविक्रमो।
विद्या भेषज मंत्रतोय हवनै र्याति प्रशांतिं यथा।
तद्वत्ते चरणांरुणांबुजयुग स्तोत्रोन्मुखानां नृणाम्
विघ्ना: कायविनायकाश्च सहसा, शाम्यन्त्यहो विस्मय:

अर्थ - क्रोधित हुए सर्पका दंश, दुर्जय विष, अग्निकी ज्वालाकी श्रेणी और विक्रम ये सर्व विद्या, औषध, मंत्र, जल और यज्ञ करके जैसे शांत होते हैं वैसे हे भगवन् ! आपके चरणरुप लाल कमलकी स्तुति करनेमें जो पुरुष तत्पर है उनके विघ्न तथा शरीरके रोग तत्काल शांति को प्राप्त होते हैं, यह बड़ा आश्चर्य हैं।।५।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

संतप्तोत्तम कांचन क्षितिधर श्रीस्पर्द्धिगौरद्युते ।
पुंसांत्वच्चरण प्रणाम करणात्पीडाः प्रयांतिक्षयम्
उद्यद्भास्कर विस्फुरत्करशत व्याघात निष्कासिता
नानादेहि विलोचन द्युतिहरा शीघ्रं यथा शर्वरी।।

अर्थ - तपाये हुए सुवर्ण के पर्वत की शोभाकी स्पर्धा करनेवाली जिनकी गौर कांति है ऐसे हे भगवन्! जैसे अनेक प्रकारके प्राणियों के नेत्रों की कांति को हरनेवाली रात्रि, तत्काल उदय होते हुए सूर्य के सैकड़ों किरणोंके व्याघात से नाश पाती हैं वैसे आपके चरण में प्रणाम करनेसे मनुष्यों का दुख दर्द तत्काल नष्ट हो जाता है।।६।।

त्रैलोक्येश्वर भङ्गलब्धविजया दत्त्यन्त रौद्रात्मकान्
नानाजन्म शतातरेषु पुरतो जीवस्य संसारिणः
को वा प्रस्खलतीह केन विधिना कालोग्र दावानलान्
नस्याच्चेत्तव पादपद्मयुगल स्तुत्यापगावारणम्।।

अर्थ - हे प्रभु! यदि आपके चरणकमल की स्तुति रुप नदी का वारण न होता तो यह कालरुपी उग्र दावानल कि जो त्रैलोक्य के ईश्वरका तप भंग करके विजय को प्राप्त है। जिसका अत्यन्त भयंकर रुप हैं, और जो नाना प्रकारके सैकड़ों जन्मोंके भीतर रहे हुए संसारी जीवोंके आगे ही रहा हुआ है उससे कौनसी विधिसे कौन प्राणी स्खलित करता है? अर्थात् कोई भी जीव यह कालरुप दावानल से मुक्त नहीं होता हैं।।७।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लोकालोक निरंतर प्रवितत् ज्ञानैक मूर्तै विभो!।
नानारत्न पिनद्ध दण्ड रुचिर श्वेतात पत्र त्रय
त्वत्पाद द्वय पूत गीतरवतः शीघ्रं द्रवंत्या मया।
दर्प्पाद्ध्मात मृगेंद्रभीम निनदा द्वन्या यथा कुञ्जराः।।

अर्थ - इस लोकालोक में नित्य विस्तार पाये हुए ज्ञानकी एक मूर्तिरुप और अनेक प्रकारसे रत्नसे जड़ित ऐसे दण्डसे शोभायमान, तीन श्वेत छत्रोंको धारण करनेवाले हे भगवन्! गर्व से भरे हुए केशरीसिंहके भयंकर शब्द से जैसे वनके हाथी भाग जाते हैं वैसे आपके चरण सम्बन्धी व पवित्र गीत के शब्द से सर्व रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाते है।

दिव्यस्त्री नयनाभिराम विपुल श्रीमेरुचूडामणे
भास्वद्बालदिवाकर द्युतिहर प्राणीष्टभामंडल।
अव्याबाधमचिन्त्य सार मतुलं त्यक्तोपमं शाश्वतं
सौख्यं त्वच्चरणार विंदयुगल स्तुत्यैव संप्राप्यते।।

अर्थ - दिव्य स्त्रियोंके नेत्रों को आनन्द देनेवाला, बड़ी शोभारुप, मेरु पर्वत के मुकुटरुप, प्रकाशमान बाल सूर्यकी कांतिको हरनेवाला और प्राणियोंको इष्ट है भामण्डल जिसका ऐसे हे प्रभू! आपके चरणकमलों की स्तुति से पीड़ा रहित, अचिंत्य साररुप अतुल्य और अनुपम ऐसा शाश्वत सुख प्राप्त होता है ।।९।।

यावन्नोदयते प्रभापरिकरः श्रीभास्करो भासयंस्
तावध्दारयतीह पङ्कजवनं निद्रातिभारश्रमं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यावत्त्वच्चरणद्वयस्य भगवन् नस्यात्प्रसादोदयस्
तावज्जीवनिकाय एष वहति प्रायेण पापं महत्।।

अर्थ - हे भगवन्! जहां तक कांतियों के समूहरुप सूर्य प्रकाश करता हुआ उदय को प्राप्त नहीं होता वहां तक कमल का वन निंद्राके अतीव भार का श्रम धारण करता है, उस प्रकार जहां तक आपके चरणोंका प्रसाद उदयको प्राप्त नहीं हुआ है वहां तक यह जीव बड़ा पाप वहन करता है ।।१०।।

शांतिंशांतिजिनेन्द्रशांतमनसत् त्वत्पादपद्माश्रयात् ।
संप्राप्ताः पृथिवीतलेषु बहवः शान्त्यर्थिंनः प्राणिनः।
कारुण्यान्मम भक्तिकस्य च विभो दृष्टिं प्रसन्नां कुरु।
त्वत्पादद्वयदैवतस्य गदतः शांत्यष्टकं भक्तितः।।

अर्थ - हे शांति जिनेंद्र । इस पृथ्वीतल में शांति को चाहनेवाले ऐसे बहुत से जीव आपके चरणकमलके आश्रयसे शांत मनवाले होकर शांतिको पाये हुये हैं इससे हे विभू! आपके चरणकमल हमारा भाग्य हैं और इस शांति अष्टक की भक्ति से पाठ करनेवाला ऐसा आपका भक्त उस पर करुणासे प्रसन्न दृष्टि करें ।।११।।

नमः श्रीवर्द्धमानाय निर्द्धूतकलिलात्मने।
सालोकानां त्रिलोकानां यद्विद्यादर्पणायते ।।12।।

अर्थ - जिनकी विद्या आलोक सहित तीनों लोकों को दर्पण के सदृश आचरण करती हैं, ऐसे मलीन स्वरुपको दूर करनेवाले श्री वर्द्धमान स्वामीको मैं नमस्कार करता हूँ ।।१२।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जिनेद्रमुन्मूलितकर्मबंध,
प्रणम्य सन्मार्गकृतस्वरुपम्।
अनन्त बोधादिभवं गुणौद्यं,
क्रियाकलापं प्रगटं प्रवक्ष्ये।।13।।

अर्थ - कर्मके बन्धको मूलसे उखाडनेवाले और सन्मार्गमें अपने स्वरुपको करनेवाले ऐसे जिनेन्द्र भगवन्त को प्रणाम करके अनन्त बोधकी आदिमें उत्पन्न हुए गुणोंके समूहवाले सामायिक आदि क्रियाकलाप को मैं प्रगटरुप से कहूँगा।।१३।।

खम्मामि सव्वजीवाणं, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मेत्ती मे सव्वभूदेसु, वैरं मज्झं ण केण वि ।।1।।

अर्थ - मैं सर्व जीवोंको क्षमा करता हूँ। सब जीव मुझे क्षमा करें, प्रत्येक जीव मात्र के साथ मेरी मैत्री हो, मुझे किसी के साथ वैर भाव ना हो ।।१।।

रागबन्धपदोसं च, हरिसं दीणभावयं।
उस्सुगत्तं भयं सोगं, रदिमरदिं च वोस्सरे ।।2।।

अर्थ - रागबन्धका दोष, हर्ष, दीनता, उत्सुकता, भय और शोक उन्हें मैं हृदयसे निकालता हूँ।।२।।

हा दुट्ठ कयं हा दुट्ठ चिंतियं, भासियं च हा दुट्ठं
अन्तो अन्तो डज्झम्मि पच्छत्ता वेण वेयंतो ।।3।।

अर्थ - जो दुष्ट कार्य किया हो, जो दुष्ट चिंतवन किया हो और जो दुष्ट कहा हो और कोई जो गुप्त रीतिसे दुष्ट कार्य हुआ हो, मैं पश्चाताप करता हुआ उनको छोड़ता हूँ।।३।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दव्वे खेत्ते काले, भावे य कदा वराहसोहणयं।
णिंदण गरहण जुत्तो, मणवयकाएण पडिक्कमणं।।

अर्थ - द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव में कभी किसीकी निंदा, गर्हा की हो उनका मैं मन, वचन और कायसे प्रतिक्रमण करता हूँ।।४।।

अथ कृत्य प्रतिज्ञा भगवन्नमस्तु एषोऽहं,
देववन्दनां कुर्यां इति सामायिक स्वीकारः।।

अर्थ - अब इस कृत्यके करनेकी प्रतिज्ञा करता हूँ – हे भगवन्! मैं आपको नमस्कार करता हूँ। यह मैं देववंदना करता हूँ, इस प्रकार सामायिक का स्वीकार करता हूँ।

समता सर्वभूतेषु संयमः शुभभावना।
आर्त्तरौद्रपरित्यागस्तद्धि सामायिकं व्रतम्।।1।।

अर्थ - सब जीवों पर समता रखना, संयमपालना, शुभ भावना धारण करना, आर्त और रौद्र ध्यानका परित्याग करना यह सामायिक व्रत कहा जाता है।।१।।

सिद्धं सम्पूर्ण भव्यार्थं सिद्धेः कारणमुत्तमम्।
प्रशस्तदर्शनज्ञानचारित्रप्रतिपादनम् ।।2।।
सुरेन्द्रमकुटा क्लिष्टपादपद्मांशुकेशरम् ।
प्रणमामि महावीरं लोकत्रितयमंगलम् ।।3।।

अर्थ - खुद सिद्धि प्राप्त हुए, भव्य अर्थसे सम्पूर्ण, सिद्धिके उत्तम कारणरुप, श्रेष्ठ, ऐसे ज्ञान दर्शन और चारित्रको प्रतिपादन करनेवाले, जिनके चरणकमलके किरण इन्द्रोंके मुकुटके साथ मिले हुए हैं और जो तीन लोकमें मंगल रुप हैं ऐसे महावीर भगवंत को मैं प्रणाम करता हूँ।।२-३।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आदौ मध्यऽवसाने च मंगलं भाषितं बुधैः।
तज्जिनेन्द्रगुणस्तोत्रं, तदविघ्नप्रसिद्धये ।।4।।

अर्थ - आरम्भमें, मध्यमें और अन्तमें मङ्गलाचरण करनेके लिए विद्वानों ने कहा है इसलिए निर्विघ्नपनेकी सिध्दि के लिए यहां श्री जिनेंद्र भगवंतको गुणों का स्तोत्र कहा गया हैं ।।४।।

विघ्नांः प्रणश्यंति भयं न,
जातु न क्षुद्रदेवाः परिलंघयंति ।
अर्थान् यथेष्टाश्च सदा लभंते,
जिनोत्तमानां परिकीर्तनेन ।।5।।

अर्थ - उत्तम तीर्थंकरोंका कीर्तन करनेसे विघ्नोंका विनाश होता है, कभी भी भय नहीं होता, नीच देवतागण पराभव धर्म का नहीं करते और इच्छानुसार, सहज ही सब पदार्थोंकी प्राप्ति होती हैं ।।५।।

सिद्धेभ्यो निष्टितार्थेभ्यो वरिष्टेभ्यः कृतादरः।
अभिप्रेयार्थसिध्दथर्थं नमस्कुर्वे पुनः पुनः ।।6।।

अर्थ - सब अर्थोके विषयमें दृढ़श्रद्धानवाले, उत्तम सिद्ध पुरुषों को इच्छित अर्थकी सिद्धिके लिये मैं आदरसे बारंबार नमस्कार करता हूँ ।।६।।

योग्यकालासनस्थानमुद्रावर्तशिरोनतिः ।
विनयेन यथाजातः कृतीकर्मामलं भजेत् ।।1।।

अर्थ - योग्य काल, आसन, स्थान, मुद्रा और आवर्तसे मस्तकको नमानेवाला और विनयसे वर्तनेवाला ऐसा कृतार्थ पुरुष निर्मल कर्मका भजन करता है ।।९।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्नपनार्च्चस्तुतिजपान् साम्यार्थं प्रतिमामार्प्यते ।
युज्यां यथाम्नायमाद्याद्दते संकल्पितेऽर्हति ।।2।।

अर्थ - प्रथम आदर किये हुए और संकल्पमें धारे हुए अरहंत भगवानसे मैं स्नान, अर्चा स्तुति, जप, समता, कार्योत्सर्ग और तृप्ति आम्नायानुसार अर्थात शास्त्र मर्यादानुसार जोड़ता हूँ।

जो दो काल सामायिक करनेवाला श्रावक यति के अनुसार मन, वचन और कायकी क्रियासे सहित ऐसे अपने आत्मामें कोई भी कभी विकारको प्राप्त नहीं हो सकता और उससे अरहंत श्रुतके लिंगको धारण करनेवाला पुरुष ग्रैवेयकसे उपर जाता है। ऐसे उसी अद्भुत वैभववाले दो कालके सामायिकको कौन सद्बुद्धिवाला भव्य पुरुष नहीं आचरण करेगा? अर्थात् उत्तम बुद्धिवाला पुरुष तो अवश्य आचरण करें ।।३।।

अत कृत्य विज्ञापना

भगवन्नमोस्तु प्रसीदतु प्रभुपादौ वंदिष्येंहमिति ।
इति एषोऽहं सव्वं सावद्ययोगद्विरतोस्मि ।।4।।

अर्थ - अब विज्ञापन करता हैं — है भगवन्! मैं आपको नमस्कार करता हूँ। आप पूज्य प्रभु हो । मैं वन्दना करुंगा। सब सावद्य योगों से मैं विराम पाता हूँ ।।४।।

अथ * पौर्वाह्निक देववंदनायां पूर्वाचार्यानु क्रमेण
सकल कर्म क्षयार्थं भाव पूजा वन्दना स्तव समेतं
श्री चैत्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।।5।।

अर्थ - अब सुबहकी देव-वन्दनामें पूर्वाचार्योंके अनुक्रमसे सकल कर्मोंके क्षयार्थ भावपूजा वन्दना और स्तवन सहित श्री चैत्य भक्तिके लिये मैं कार्योत्सर्ग करता हूँ ।।५।।

---

* पौर्वाह्निक, मध्याह्न, अथवा अपराह्निक
सुबह मध्याह्न या शाम जो समय ही वह समय पढ़ें ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।।

अर्थ - अरिहंत को नमस्कार हो, सिद्धको नमस्कार हो, आचार्यंको नमस्कार हो, उपाध्यायको नमस्कार हो और लोकके विषे रहे हुए सब साधुओंको नमस्कार हो।

चत्तारि मंगलं अरिहंता मंगलं सिद्धा मंगलं साहू मंगलं केवली पण्णात्तो धम्मो मंगलं। चत्तारिलोगुत्तमा । अरिहन्ता लोगुत्तमा । सिद्धा लोगुत्तमा । साहू लोगुत्तमा । केवलिपण्णात्तो धम्मो लोगुत्तमा । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि। अरहन्तो सरणं पव्वज्जामि। सिद्धे सरणं पव्वज्जामि। साहु सरणं पव्वज्जामि। केवलिपण्णतं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।

अर्थ - केवलीका प्ररुपण किया हुआ धर्म मंगल है। चार लोकोत्तम हैं – अरिहंत लोकोत्तम, सिद्ध लोकोत्तम, साधु लोकोत्तम, केवली भगवान का प्ररुपण किया हुआ धर्म लोकोत्तम हैं अरिहंतकी शरणमें जाता हूँ, सिद्धकी शरणमें जाता हूँ, साधू के शरण में जाता हूँ केवली के प्ररुपण किये हुए धर्मकी शरणमें जाता हूँ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अड्ढाईज्जदीवदोसमुद्देसु पण्णारस कम्मभूमीसु जाव अरहन्ताणं भयवंताणं आदियराणं तित्थयराणं जिणाणं जिणोत्तमाणं केवलियाणं सिद्धाणं बुद्धाणं परिणिव्बुदाणं अन्तयडाणं पारयडाणं धम्माइरियाणं धम्मदेसयाणं धम्मणायगाणं धम्मवरचावरंगचवक्कवट्टीणं देवाहिदेवाणं णाणाणं दंसणाणं चरिताणं सदा करेमि किरियम्मं। करेमि भंते। सामइयं सव्वज्जोगं पचक्खामि जावज्जीव तिविहेणमणसावचिया कायेण ण करेमि ण कारेमि अण्णं करन्तं पि समणुमणामि । तस्स भंते! अइचारं पडिक्कमामि णिंदामि गरहामि अप्पाणं जाव अरहन्ताणं भयवन्ताणं णमोकारं पज्जुवासं करेमि तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

अर्थ - ढाई द्वीप दो समुद्र सम्बन्धी जो पन्द्रह कर्मभूमि क्षेत्रमें होनेवाले जितने अरिहंत, भगवंत आदि तीर्थ प्रवर्तक, तीर्थंकर, जिनेश्वरोंको, जिनोत्तमकों, केवलीयोंको, सिद्धोंको, सर्वज्ञों को, मुक्ति को प्राप्त करने

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वाले सिध्दों को, अंतकृत केवलीको, संसार सागर को पार करने वालों को, धर्मांचार्यको, चतुर्विध संघको, द्वादशांगीरुप अमृतका पान करानेवालोंको, धर्मके नायकको धर्मप्रधान – श्रेष्ठ हैं। चारो गतियोंका अन्त करनेके लिये उत्तम चक्रवर्ती समानको, देवाधिदेवको, ज्ञानको, दर्शनको, चारित्रको हमेशा मैं करता हूँ, हे भदन्त। मैं सामायिक करता हूँ। मैं जहांतक नियम हो वहांतक सब सावद्ययोगों का त्याग करता हूँ। जीवन पर्यन्त तीनों प्रकार से मन वचन काय से सावद्ययोग न स्वयं करता हूँ न दूसरों से कराता हूँ और न करने वालों की अनुमोदना करता हूँ। हे भगवन् ! उन अरहंत देव कथित क्रिया कर्म सम्बन्धी अतिचारों का प्रतिक्रमण करता हूँ। आत्मसाक्षी पूर्वक निंदा करता हूँ। गुरू साक्षी पूर्वक गर्हा करता हूँ जितने काल अरहंतों की भगवन्तों की पर्युपासना करता हूँ उतने काल पर्यन्त पापकर्मों को कुचेष्टाओं को छोड़ता हूँ।

थोस्समि हं जिणवरें तित्थयरें केवली अणंतजिणे
णरपवर लोय महिए, विहुयरमले महप्पणे ।।1।।

अर्थ - ॐ कारको नमस्कार हो। परमात्माको, अनेकांतको, संतो को मैं नमस्कार करता हूँ । जिनवरको, तीर्थंकरको, केवलीको, अनन्त जीनेन्द्र को तथा लोक में श्रेष्ठ लोगोंसे पूज्य और रजोमलसे सहित ऐसे महात्मा को नमस्कार करता हूँ ।।९।।

लोयस्सुज्जोययरे, धम्मं तित्थंकरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिसे, चउविसं चेव केवलिणो ।।2।।

अर्थ - लोकमें उद्योत करनेवाले, धर्मप्रधान जो तीर्थरुप ऐसे जिन भगवन्तको मैं वन्दना करता हूँ और कर्मरुप शत्रुओंका हननेवाले अरिहंत और केवलज्ञानी चोबीस तीर्थकरों का मैं स्तवन करुंगा ।।२।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उसहमजिंयं च वंदे संभव मभिणंदणं च सुमइं च
पउमप्पहं, सुपासं जिणं च चंदप्पहं वंदे ।।3।।

अर्थ - ऋषभदेव, अजितस्वामी, सम्भवनाथ, अभिनंदन, सुमतिनाथ, पद्मप्रभु, सुपार्श्वनाथ और चन्द्रप्रभुकी मैं वन्दना करता हूँ ।।३।।

सुविहिं च पुप्फयंतं, सीयलसेयं च वासुपुज्जं च।
विमलमणंतं भयवं, धम्मं संतिं च वंदामि ।।4।।

अर्थ - सुविधिनाथ, पुष्पदंत, शीतलनाथ, श्रेयांस, वासुपुज्य, विमलनाथ, अनंतनाथ, धर्मनाथ, शांतिनाथ भगवान की मैं वन्दना करता हूँ।।४।।

कुंथुं च जिण वरिदं, अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णाममि।
णमिवंदामि रिट्ठणेमिं तहपासं वड्ढमाणं च ।।5।।

अर्थ - कुन्थुनाथ, अरनाथ मल्लिनाथ, मुनिसुव्रत नमि-अरिष्टेनेमि, पार्श्वनाथ और वर्द्धमानस्वामी को मैं नमस्कार करता हूँ ।।५।।

एवं मए अभित्थुया, विहुयरयमला, पहिण जरमरणा
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ।।6।।

अर्थ - ऐसे वे भिक्षुक, रजोमलरहित और जरा मरणसे रहित ऐसे चोबीस तीर्थंकर मुझे प्रसन्न हों ।।६।।

कित्तिय वंदिय महिया, एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा
अरोग्ग णाण लाहं, दिंतु समाहिं च मे बोहिं ।।7।।

अर्थ - जिनकी महिमा कीर्ति रुपसे पाई गई है ऐसे लोकमे उत्तम सिद्ध भगवन्त मुझे आरोग्य और ज्ञानको लाभ दें और समाधि तथा बोधि लाभ दें।।७।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चंदेहिं णिम्मलयरा, आइच्चेहिं अहिय पयासंता।
सायर मिव गंभीरा, सिध्दा सिध्दिं मम दिसंतु।।8।।

अर्थ - चन्द्र जैसे निर्मल, सबका हित करनेवाले सागर जैसे गम्भीर ऐसे सिद्ध पुरुष मुझे सिद्धि दें।।८।।

यावन्ति जिनचैत्यानि विद्यान्ते भुवनत्रये।
तावन्ति सततं भक्त्या, त्रिःपरीत्य नमाम्यहं।।9।।

अर्थ - इस तीन भुवनमें जितने भी चैत्यालय है उन जिन चैत्योंको हमेशा तीन प्रदक्षिणा करके भक्ति से मैं नमस्कार करता हूँ।।९।।

[प्रतिक्रमण करनेवालोंको यहां तक पढ़कर प्रतिक्रमण पढ़ना चाहिये और प्रतिक्रमण न करना हो तो आगे का सामायिक चालू रखना चाहिये।]

जयति भगवान् हेमांभोज प्रचारविजृम्भिता
वरम मुकुटच्छायोद् गीर्णप्रभापरिचुम्बितौ।
कलुष हृदया मानोद् भ्रांताः परस्परवैरिणः
विगत कलुषाः पादौ यस्य प्रपद्य विशश्वसुः।।2।।

अर्थ - सुवर्ण कमलपर प्रचार करनेवाले और नत मस्तक ऐसे, देवताके मुकुटकी कीर्तिको स्पर्शन करनेवाले ऐसे जिनके दो चरणको प्राप्त करके तो पुरुष, मलिन हृदयवाले मानस भ्रमित और परस्पर वैरवाले हैं वे भी पापरहित होकर परस्पर विश्वासी होते हैं ऐसे वे भगवन् जयको पाते हैं।।२।।

तदनु जयति श्रेयान् धर्मः प्रवृद्धमहोदयः
कुगति विपथ क्लेशाद्योऽसौ विपाशयति प्रजाः

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

परिणत नयस्याङ्गी भावाद् विविक्तविकल्पितं
भवतु भवतास्तोतृ त्रेधा जिनेंद्रवचोऽमृतं।।3।।

अर्थ - बुरी गतिरुप विपरित मार्गके कलेशसे जो प्रजाको छुड़ाते हैं ऐसे महोदयको बड़ानेवाला श्रेष्ठ धर्म जय पाता है। परिणत नयके अङ्ग भावसे विवेचन किये हुए श्री जिनेन्द्र भगवन्तके तीन प्रकारके वचनामृत आपकी रक्षा करनेवाले हों।।३।।

तदनुजयताज्जैनी वित्तिः प्रभङ्गतरंगिणी।
प्रभव विगम ध्रौव्य द्रव्य स्वभाव विभाविनी।।
निरुवम सुखस्येदं द्वारं विघट्य निरर्गलं।
विगतरजसं मोक्षं देयान्निरत्यय मव्ययम्।।4।।

अर्थ - उसके बाद अनेक प्रकारकी सरितारुप और उत्पत्ति विनाश और ध्रौव्य ये तीन प्रकारके द्रव्य स्वभावको बतानेवाली जैनकी वह ज्ञानसम्पत्ति जयको प्राप्त हो। जो ज्ञानसम्पत्ति निरुपम सुख अर्थात् मोक्ष सुखका खुला हुआ द्वार है वह रजोगुण रहित, अविनाशी और अव्यय ऐसे मोक्ष को दें।।४।।

अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायेभ्यस्तथा च साधुभ्यः।
सर्वंजगद्वंद्येभ्यो, नमोस्तु सर्वत्र सर्वेभ्यः।।1।।

अर्थ - सब जगतको वन्दन करने योग्य ऐसे अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और सर्वसाधुको हमेशा नमस्कार हो।।१।।

मोहादिसर्वदाषारि घातकेभ्यः सदाहतरजोभ्यः।
विरहितरहस् कृतेभ्यः पूजार्हेभ्योः नमोऽर्हद्भ्यः।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ - मोहादिक सब दोषरुपी शत्रुओं का नाश करनेवाले, रजोगुणको हरनेवाले और दुष्कृत्य रहित ऐसे पूजने योग्य अर्हंत् भगवन्तको मैं नमस्कार करता हूँ।।२।।

क्षांत्यार्जवादि गुणगण सुसाधनं, सकल लोक हित हेतुं।
शुभधामनि धातारं वन्दे, धर्मं जिनेन्द्रोक्तम्।।3।।

अर्थ - शांति,सरलता आदि गुणोंके समुहको सम्पादन करनेवाले साधुस्वरुप, सब लोक के हितके कारण और शुभ प्रकाशको बढ़ानेवाले ऐसे जिनेन्द्रभाषित धर्मकी मैं वन्दना करता हूँ।।३।।

मिथ्याज्ञान तमोवृत लोकैक ज्योति रमित गमयोगि
सांगोपांग मजेयं, जैनं वचनं सदा वन्दे।।4।।

अर्थ - मिथ्या ज्ञानरुपी अन्धकारसे व्याप्त ऐसे लोकमें ज्योतिरुप, मानसे रहित, किसीके योगसे रहित, अङ्ग उपाङ्ग सहित और ज्योति विलीन ना हो ऐसी जिनवाणी की मैं सदा वन्दना करता हूँ।।४।।

भवन विमान ज्योति र्व्यंतर नर लोक विश्व चैत्यानि।
त्रिजग दभिवंदितानां, त्रेधा वन्दे जिनेन्द्राणाम्।।5।।

अर्थ - भवन, विमान, ज्योति, व्यन्तर और नर इन सर्वलोकमें रहे हुए ऐसे तीन जगत वन्दनीय जिनेन्द्रो के सब चैत्योंकी मैं मन, वचन और कायसे वन्दना करता हूँ।।५।।

भुवनत्रयेऽपि भुवन त्रयाधि पाभ्यर्च्य तीर्थ कर्तॄणाम्
वन्दे भवाग्नि शान्त्यै विभवाना मालयालीस्ता: ।।6।।

अर्थ - संसार रहित तीन भुवनके स्वामियोंको पूजन करने योग्य ऐसे तीर्थंकरोकी, तीन भुवनमें स्थित चैत्योंकी श्रेणियोंकी, संसाररुप अग्निकी शांतिके लिये मैं वन्दना करता हूँ।।६।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इति पंच महापुरुषाः प्रणता जिनधर्मवचनचैत्यानि
चैत्यालयाश्च विमलां, दिशंतु बोधिं बुधजनेष्टाम्

अर्थ - इस प्रकार स्तुति किये गये पंचपरमेष्ठी, पुरुष, जिनधर्म, जिन वचन (वाणी), जिन प्रतिबिम्ब और जिन चैत्य (मन्दिर) ये सब, विद्वान् पुरुषोंसे इच्छित निर्मल बोध को दे ।।७।।

अकृतानि कृतानि चा प्रमेयद्युतिमन्ति, द्युतिमत्सु मंदिरेषु,
मनुजामरपूजितानि वन्दे, प्रतिबिंबानि जगत्त्रये जिनानाम् ।।1।।

अर्थ - कांतिवाले चैत्यमें रहे हुए अप्रमेय कांतिसे सुशोभित और मनुष्य तथा देवताओंसे पूजित ऐसे तीन जगत्के शाश्वत् और स्थापित जिन भगवन्तके प्रतिबिम्बोंकी मैं वन्दना करता हूँ।।१ ।।

द्युतिमंडल भासुरांग यष्टीः प्रतिमा अप्रतिमा जिनोत्तमानां ।
भुवनेषु विभूतये प्रवृत्ता वपुषा प्राञ्जलि रस्मि वंदमानः ।।2।।

अर्थ - कांतिके मण्डल से जिनके अङ्गकी यष्टि प्रकाशमान है, तीन भुवनमें जो मोक्ष-सम्पत्तिसे विभूषित है और शरीरसे जिसको कोई उपमा दी नहीं जा सकती ऐसी जिन प्रतिमाओंकी मैं दो हाथ जोड़कर वन्दना करता हूँ ।।२।।

विगतायुध विक्रियाविभूषाःप्रकृतिस्था कृतिनां जिनेश्वराणाम्।
प्रतिमा प्रतिमा गृहेषु कांत्या प्रतिमाः कल्मष शांतयेऽभिवंदे ।।3।।

अर्थ - जिन्होंने शस्त्रादि विक्रयाका त्याग किया है। जिनके पास वस्त्राभूषण नहीं रहते जिससे अपने सच्चे प्रकृति स्वरुपमें रही हुई और

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चैत्योंमें कांतिसे अनुपमपनेको बिराजित ऐसे कृतार्थ भगवत् प्रतिमाओंको पापकी शांतिके लिये मैं वन्दना करता हूँ ।।३ ।।

कथयन्ति कषाय मुक्तिलक्ष्मीं, परया शांततया भवांतकानाम्।
प्रणमाम्य भिरुप मूर्ति मंति, प्रतिरुपाणि विशुध्दये जिनानाम् ।।4 ।।

अर्थ - जो संसारको नाश करनेवाले मुनिगण और प्राणियोंको अपनी उत्कृष्ट शांति से कषायों की मुक्तिरुप लक्ष्मीकों कहते हैं ऐसे अभिरुप मूर्तिवाले भगवन्तको प्रतिबिम्बोंको शुद्धिके लिये प्रणाम करता हूँ ।।४ ।।

यदिदं मम सिध्द भक्तिनीतं, सुकृत दृःकृतं वर्त्मरोधितेन।
पटुना जिनधर्म एव भक्तिर्, भवताज्जन्मनि जन्मति स्थिरा मे।।

अर्थ - दुष्कृत्यके मार्गको रोकनेमें चतुर ऐसे सिद्ध पुरुषोंकी भक्तिसे जिन सुकृत सम्पादन किया हो तो उससे भवभवमें मेरी भक्ति जिन धर्ममें स्थिर हो जाये ।।५ ।।

अर्हतां सर्वभावानां दर्शनज्ञानसम्पदाम्।
कीर्तयिष्यामि चैत्यानि यथाबुद्धि विशुद्धये ।।1 ।।

अर्थ - सब भावोंको जाननेवाले, दर्शन व ज्ञानकी सम्पत्तिवाले ऐसे अरहंत भगवानके चैत्योंको बुद्धिकी शुद्धिके लिये मैं स्तुति करुंगा ।।१ ।।

श्रीमद्भवनवासस्था: स्वयं भासुरमूर्त्तय:।
वन्दिता नो विधेयासु: प्रतिमा: परमां गतिम् ।।2 ।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ - शोभायमान ऐसी भावनारुप मन्दिरमें रही हुई, स्वाभाविक प्रकाशमान मूर्तियुक्त प्रभुकी प्रतिमाकी वन्दना, करने से हमें परमगति प्राप्त हों ।।२।।

यावन्ति संति लोकेऽस्मिन्नकृतानि कृतानि च।
तानि सर्वाणि चैत्यानि वन्दे भूयांसि भूतये ।।3।।

अर्थ - इस लोकमें जितने शाश्वत् और स्थापित चैत्य है उन सब चैत्योंकी, आत्म संपत्तिके लिये वन्दना करता हूँ ।।३।।

ये व्यंतर विमानेषु स्तेयांसः प्रतिमागृहाः
ते च संख्या मतिक्रांताः संतु नो दोष विच्छिदे ।।4।।

अर्थ - व्यंतरोके विमानोंके भीतर जो शाश्वत् प्रतिमाओंके असंख्य चैत्य है वे चैत्य हमारे दोषोंकी शांतिके लिये हो ।।४।।

ज्योतिषामथ लोकस्य भूतयेऽद्भुतसंपदः।
गृहाः स्वयंभुवः संति विमानेषु नमामि तान् ।।5।।

अर्थ - ज्योतिषी देवताके लोकमें, विमानोंमें समृद्धिके लिये जो अद्भुत सम्पत्तिवाले शाश्वत चैत्य है उनको मैं नमस्कार करता हूँ।।५।।

वन्दे सुरकिरीटाग्र मणिच्छाया भिषेचनम्।
याः क्रमेणैव सेवंते तदर्च्चाः सिद्धिलब्धये।।6।।

अर्थ - जिन भगवंतकी प्रतिमायें देवताके मुकुटके अग्र भागके मणियोंके कांतिके अभिषेकोंसे अपने चरणोंसे सेवन करते रहते है उन प्रतिमाओंको, सिद्ध प्राप्तिके लिये मैं वंदना करता हूँ ।।६।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इति स्तुतिपथातीत श्रीभृतामर्हतां मम।
चैत्यानामस्तु संकीर्तिः सर्वास्त्रव निरोधिनी ।।7।।

अर्थ - स्तुति, विषयको उल्लंघन करनेवाली लक्ष्मीको धारण करनेवाले ऐसे श्री अरहन्त भगवानके चैत्योंको इस प्रकार किया हुआ कीर्तन मेरे सब आस्त्रवों का निरोध करनेवाला हो।।७।।

अर्हन्महानदस्य त्रिभुवनभव्यजन-तीर्थयात्रिक दुरितं
प्रक्षालनैक कारणमतिलोकिक कुहक तीर्थ मुत्तम तीर्थम् ।।1।।

अर्थ - अर्हन्त भगवानरुप बड़ा एक तीर्थ है वह तीर्थ तीन भुवनके भव्यजनरुपी यात्रियोंके पापको धोनेमें एक कारणरुप होनेसे लौकिक तीर्थ कृत्रिम है और वह तीर्थ उत्तम है।।१।।

लोकालोक सुतत्त्व प्रत्यव बोधन समर्थ दिव्य ज्ञान।
प्रत्यह वहत्प्रवाहं व्रतशीलामल विशाल कूलद्वितयं ।।2।।

अर्थ - इस तीर्थमें लोकालोक और शुभ तत्वोंको प्रतीत करनेवाले ऐसे और बोध करनेका समर्थ ऐसा दिव्य ज्ञानरुपी प्रवाह हमेशा वहन करता रहता हैं । इन तीर्थ के व्रत और शीलरुपी दो विशाल और निर्मल ऐसे दो तट है ।।२।।

शुक्लध्यान स्तिमित स्थित-राजद्राजहंस राजित मसकृत ।
स्वाध्याय मंद्रघोषं नाना गुण समिति गुप्ति सिकता सुभगम् ।।3।।

अर्थ - इस अर्हन्तरुपी तीर्थ में शुक्ल ध्यान में निश्चय होकर रहे हुए मुनिरुपी राजहंस विराजमान रहे हैं, इसमें स्वाध्यायरुपी मंदघोष हुआ करता है और अनेक प्रकारके गुण, पांच प्रकारकी समिति तथा तीन प्रकारकी गुप्तिरुपी रेतसे यह तीर्थ बहुत सुन्दर मालूम होता है ।।३।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

क्षान्त्यावर्त्त सहस्त्रं, सर्वदया-विकच कुसुम विलसल्लमतिकम्।
दु:सहपरीषहाख्य द्रुततर रंगत्तरंग भंगुर निकरम् ।।4।।

अर्थ - इस तीर्थमें क्षमारुप हजारों आवर्त है, सब जीवोंपर दयारुपी विकसित पुष्पयुक्त लतायें हैं और दु:सह परिषहरुपी चपल तरङ्गोंकी उसमें रचना होती है ।।४।।

व्यपगत कषाय फेनं रागद्वेषादि दोष शैवल रहितम् ।।
अत्यस्त मोहकर्दममतिदूर निरस्त मरण मकर प्रकरम्

अर्थ - इस तीर्थमें कषायरुपी परिणाम नहीं है, रागद्वेषादिरुप काई नहीं है, मोहरुपी कर्दम विनाश हो गया है और मृत्युरुप मगरका समूह अतीव दूरसे ही अस्त हो गया है ।।५।।

ऋषिवृषभ स्तुति मंद्रोद्रे-कित निर्घोष विविध विहगध्वानं।
विविध तपोनिधि पुलिनं सास्त्रव संवरण निर्जरा नि:स्त्रवणम्।।6।।

अर्थ - इस तीर्थमें मुनिगण द्वारा की हुई श्री ऋषभमुनिकी स्तुति उसके शब्दके घोषरुपी पक्षियोंकी ध्यानि होती रहती हैं। विविध प्रकारके झरने उसमें निकलते रहते हैं।।६।।

गणधर चक्र धरेंद्र प्रभृति महा-भव्यपुंडरीकै: पुरुषै:।
बहुभि: स्नातं भक्त्या कलि कलुष मलापकर्षणार्थममेयं ।।7।।

अर्थ - गणधर चक्रवर्ति और इन्द्र आदि महाभव्य पुण्डरीक पुरुषोंने कलियुगके पापरुप मलको दूर करनेके लिये इस अमेय तीर्थमें भक्तिसे स्नान किया हैं।।७।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अवतीर्णवत: स्नातुं ममापि दुस्तर समस्तदुरितं दुरम्।
व्यवहरतु परमपावन मनन्य जय स्वभाव भावगंभीरं ।।8।।

अर्थ - परम पवित्र करनेवाला, दूसरेसे जीता न जा सके ऐसे स्वभाव और भावसे गम्भीर ऐसा वह तीर्थ है। उसमें स्नान करनेके लिए प्रवेशनेवाले ऐसे मेरे समस्त दुस्तर पाप दूर हों ।।८।।

अताम्र-नयनोत्पलं-सकलकोप-वन्हे-र्जयात,
कटाक्ष-शरमोक्ष-हीन-मविकार-तोद्रेकत:।
विषाद-मद-हानित:-प्रहसिताय-मानं-सदा,
मुखं कथयतीव ते हृदयशुद्धि मात्यंतिकिम् ।।1।।

अर्थ - हे प्रभु! सभी कोपरुप अग्निका जय करनेसे आरक्त ऐसे नेत्र कमलवाले अविकारके अधिकपनसे कटाक्षरुपी बाणके मोक्षसे रहित ऐसा और खेद तथा मदको हानिसे हमेंशा हास्य करनेवाला ऐसा आपका मुख हृदयको अत्यन्त शुद्धिको कह देता हैं।।१।।

निराभरण-भासुरं-विगत-राग-वे-गोदयात्।
निरंबर-मनोहरं-प्रवृत्ति-रुपनिर्दोषत:।।
निरायुध-सुनिर्भयं-विगत-हिंस्य-हिंसाक्रमात्,
निरामिष-सुतृप्ति-मद्विविध-वेदनानां-क्षयात्।।2।।

अर्थ - हे भगवन्! आपका रुप जो रागके वेगका उदय नाश पानेसे आभूषण रहित हैं तो भी प्रकाशमान है, प्राकृतिक रुपकी निर्दोषतासे दिगम्बर होते

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हुए जो मनोहर हैं, हिंसा करने योग्य और हिंसा ये दो क्रम न होनेसे शस्त्ररहित होते हुए जो निर्भय हैं, और विविध प्रकारके वेदनाका क्षय होनेसे भोगरहित होते हुए भी तृप्तिको प्राप्त है।।२।।

मितस्थितन-खांगजं-गतरजोमल-स्पर्शनं,
नवांबुरूह-चंदन-प्रतिम-दिव्यमंधोदयं।
रवीन्दु-कुलिशा-दिदिव्य-बहु-लक्षणालंकृतम्,
दिवाकर-सहस्त्र-भासुर-मपीक्षणानां-प्रियं ।।3।।

अर्थ - हे भगवन्! आपका रुप ऐसा है कि जिसमें नाखून और केश प्रमाणसे रहे हुए हैं जिसको रजोमलका स्पर्श भी नहीं होता, जिसमें नवीन कमल तथा चन्दन जैसी दिव्य गंधका उदय होता हैं, जो सूर्य चन्द्र तथा वज्र आदि बहुत पवित्र लक्षणोंसे अलंकृत हैं, जो हजारों सूर्य जैसा प्रकाशमान हैं और जो नेत्रोंका अति प्रिय लगता हैं।।३ ।।

हितार्थ-परिपंथिभि:-प्रबल-राग-मोहादिभि:
कलंकितमना-जनो-यदभी-वीक्ष्य-शोशुध्यते।
सदाभि-मुखमेव-तज्जगति-पश्यतां-सर्वत:
शरद्विमल-चन्द्र-मंडल-मिवोत्थितं-दृश्यते।।4।।

अर्थ - हित अर्थके शत्रुरुप ऐसा राग मोहादिकसे जिसका मन कलङ्कित हुआ हैं, ऐसा मनुष्य जिस रुपको देखनेसे अत्यंत शुध्द हो जाता है और इस जगतमें जिस रुपको देखनेवाले मनुष्योंको ग्रह रुप शरदऋतुके निर्मल चन्द्रमण्डलकी तरह सदा सन्मुख उदयको प्राप्त हुआ दिखाई देता हैं।।४।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तदे-तदमरे-श्वर-प्रचल-मौलि-माला-मणि-
स्फुरत्किरण-चुम्बनीय-चरणार-विंदद्वयम।
पुनातु-भगवत्-जिनेन्द्र-तव-रुपमंधीकृतं
जगत्सकल-मन्य-तीर्थ-गुरु-रुप-दोषोदयैः।।5।।

अर्थ - हे जिनेन्द्र भगवन्! इन्द्रोंके चलायमान मुकुटकी पंक्तियोंकी मणियोंकी किरणोंसे जिसके चरणकमलका युगल चुम्बन करने योग्य है ऐसा आपका रुप, अन्य तीर्थ और अन्य गुरु के संगरुप दोषके उदयसे अन्ध हुए इस सर्व जगतको पवित्र करें।

मानस्तंभाः सरांसि प्रविमलजल- सत्खातिका पुष्पवाटी ।
प्राकारो नाटयशालाद्वितय मुपवनं वेदिकांत र्ध्वजाद्याः।।
शालः कल्पद्रुमाणा सुपरि-वृतवनं स्तूपहर्म्यांवली च।
प्राकारः स्फाटिकोंत र्नृसुरमुनिसभा पीठिकाग्रे स्वयंभूः।।6।।

अर्थ - मानस्तंभ, सरोवर, निर्मल जल, खाई, फूलोंका बगीचा, किला, दो नाट्यशाला, उपवन, वेदिका, भीतर ध्वजाऐं शाल, अच्छी वाडवाले कल्पवृक्षोंका वन, स्तूप, मकानोंकी पंक्तियां स्फटिक मणिका किला, उसके भीतर मनुष्य, देव और मुनियोंकी सभा उसके बाद पीठिका, उसके उग्र भागमें स्वयंभू भगवान् विराजमान हैं।।६।।

नताखण्डलमौलीनां यत्पादनखमण्डलम् ।
खंड़ेन्दुशेखरीभूतं नमस्तस्मै स्वयंभुवे ।।7।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ - जिसके चरणनखोंके मण्डलको नम्रीभूत ऐसे इन्द्रके मुकुटोंके अर्ध - चन्द्रशेखर (अर्ध चन्द्र हैं जिसके शेखरमुकुटमें है ऐसे शंकर) रुप हुआ है वे स्वयंभू भगवन्तको नमस्कार हो ।।७।।

चंद्रप्रभं चंद्र मरीचि गौरं, चंद्रं द्वितीयं जगतीव कांतम्।
वंदेऽभिवंद्य महता मृषीदं, जिनं जित स्वांत क षाय वन्धम् ।।8।।

अर्थ - चन्द्रके किरण जैसे, गौर जिससे जगतमें दूसरा चन्द्र ही न हो ऐसा मनोहर, बड़े पुरुषोंको वंदन करने योग्य और हृदय तथा कषायके बंधको जीतनेवाले ऋषियोंके इन्द्र चन्द्रप्रभुकी मैं वंदना करता हूँ ।।८।।

यस्यांग लक्ष्मी परिवेष भिन्नं, तमस्तमोऽरे रिव रश्मि भिन्नं।
ननाश बाह्यं बहुमानसं च, ध्यान प्रदीपाति शयेन भिन्नं ।।२।।

अर्थ - सूर्यके किरणोंसे भेद पाया हुआ बाहरका अंधकार जैसे नाशको प्राप्त होता है उसी प्रकार जिसके अंगके परिवेष (भामण्डल) से भेदको प्राप्त बाहरका अंधकार और ध्यानरुपी दीपकके प्रकाशसे भेदको प्राप्त भीतरका बहुत अंधकार नाश हो जाता है।।२।।

स्वपक्ष सौस्थित्य मदाव लिप्ता, वाक् सिंह नादै र्विमदा बभूवु:।
प्रवादिनो यस्य मदार्द गंडा, गजा यथा केशरिणो निनादै: ।।३।।

अर्थ - मदसे जिसके गंडस्थल आर्द्र है ऐसे हस्ति (हाथी) जैसे केशरीसिंहके नादसे मद रहित हो जांय पैसे अपने पक्षकी स्थितिके

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मदसे गर्व करनेवाले ऐसे वादी पुरुष जिन भगवन्तकी वाणीरुप सिंहनाद से मद रहित हुए हैं ।।३।।

यः सर्वलोके परमेष्ठितायाः, पदं बभूवाद्भुत कर्मतेजाः।
अनंतधामाक्षर विश्वचक्षुः, समंतदुःख क्षय शासनश्च ।।४।।

अर्थ - अद्भुत कर्मरुप तेजको धरनेवाले, अनन्तधाम, अक्षय (अविनाशी), विश्वके चक्षुरुप और जिनका शासन अनंत दुःखोका क्षय करनेवाला है ऐसे जो प्रभु सब लोकमें परमेष्ठीपदके स्थान रुप हुए है ।।४।।

स चन्द्रमा भव्य कुमुद्वतीनां, विपन्न दोषाभ्र कलंक लेपः।
व्याकोश वाङ्न्याय मयूख मालःपूयात्पवित्रो भगवान मनोमे।।५।।

अर्थ - विनाश पाये हुए दोषरुप आकाश के कलङ्क लेपसे रहित और जिसकी न्याय वाणी सब विकसित किरणोंकी माला है ऐसे भव्यजन रुपी कमलके पुष्पको विकसित करने वाले चन्द्ररुपी पवित्र भगवान मेरे मनको पवित्र करें।।५।।

अर्थ - हे भगवान्! आपने सांसारिक जीवोंको ब्रह्मानुष्ठानको तथा रत्नत्रयको देकर पुष्ट किया इसलिये आप वास्तवमें क्षत्रिय हैं, क्योंकि क्षत दुःखित जीवनका रक्षक ही क्षत्री कहलाता है और तपश्चरण करनेपर आप केवलज्ञानधारी हुए इसलिये आप मुनि गणधरादिक उत्तम पुरुषोंमें भी उत्तम हो गये ।।६।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ - ऋषीश्वरों द्वारा जिनके चरणकमल पूजित हैं ऐसे ऋषभनाथ! आप जयवंत हो। कामदेव तथा रागको जीतनेवाले हे अजितनाथ! आप जयशाली हों। जिन्होंने दु:खमयी सांसारिक दु:खोंको हटा दिया हैं ऐसे हे संभवनाथ! आप जयवान हो। दर्शनोपयोगी तथा ज्ञानोपयोगके बढ़ानेवाले हे अभिनन्दननाथ! आपकी जय हो।।१।।

सत्य मतके प्रकाश करनेवाले केवलज्ञानधारी हे सुमतिनाथ! आप जयशील हो। केवलज्ञान, केवलदर्शनादिक तथा कीर्ति, कांति आदि लक्ष्मीके निवासालय, हे पद्मप्रभु जिनेश! आप जयधारी हो।

समचतुरस्त्रसंस्थान और वज्रवृषभनाराच संहननके कारण असाधारण सुन्दरतायुक्त है पार्श्वभाग जिसमें ऐसे सुन्दर शरीरवाले तथा संसारी जीवोंकी रक्षा करनेवाले हे सुपार्श्वनाथ भगवन्! आपकी सदा जय हो। चांदनीके समान जीवोंको सुख, शांति तथा आह्लादका देनेवाला तथा अज्ञानांधकारको भगानेवाला है मुख जिनका ऐसे हे चन्द्रप्रभ जिनेश! आप सदा जयवंत हों।।२।।

जिन्होंने अंतरंगको दमन किया हैं ऐसे हे पुष्पदंत जिन! आप जयशील हों। संसारके असह्य संतापसे तड़फड़ाते हुए जीवोंके लिये शीतल वचन-शैलीके धारक तथा सप्तभंगीके धारक हे शीतलनाथ भगवान्! आप सदा जयवंत हों।

सूर्यके समान कल्याणस्वरुप किरणोंके धारण करनेवाले हे श्रेयांसनाथ स्वामिन्! आप सदा जयवान हों। देव, मनुष्य तिर्यंचोंसे पूज्य,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इन्द्र, अहमिंद्र, नरेन्द्र, चक्रवर्ती गणधर मुनीश्वर तथा सिंहादिकोके द्वारा पूजनीय हे वासुपूज्य जिनपते ! आप सर्वदा जयधारक हों ।।३ ।।

क्षुधादिक दोषोंसे रहित, निर्मल गुणोंको पानेके लिये श्रेणियोंके समान हे विमलनाथ भगवान् ! आप सदा जयशाली हों। त्रिकालवर्ती जीव पुद्गलादि छह द्रव्योंके अनंतानंत भेदोंको तथा अनंतानंत पर्यायोंको एकसाथ प्रत्यक्ष जाननेवाले अनन्तर ज्ञानधारी श्री अनंतनाथ जिनेश्वर ! आप वारंवार जयशील हों।

नरक, निगोद तथा तिर्यंचादि योनियों में दु:खसे व्याकुल संसारसागरके दु:खोके चक्करमें पड़े हुए जीवोंका उद्धार करनेके लिये सम्यग्दर्शनादिरुप धर्मतीर्थं (धर्मरुपी घाट) के करनेवाले श्री धर्मनाथ तीर्थंकर सदा जयवंत हो।

ज्ञानावरणादि कर्मोंके प्रचण्ड तापको दूर करनेके लिये छत्रके धारक अथवा दु:खोंसे संतप्त जीवोंकी रक्षा करनेको सदुपदेशरुपी छाया को प्रदान करनेवाले श्री शांतिनाथ महाराज हमारे हृदयमें जयशाली रहें ।।४।।

कुन्थु आदिक समस्त संसारवर्ती जीवोंपर परम दयालु अलौकिक निराकुल सुखको प्रदान करनेवाली मुक्तिसुन्दरीके वर श्री अरनाथ तीर्थंकर। आपकी सदा जय हो।

रोग शोक दुर्गंधादिके नष्ट करनेवाले तथा मालती पुष्पों की मालाके समान धार्मिक सुगन्धिके फैलानेवाले श्री मल्लिनाथ भगवान्। आपकी सदा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जय जय कार हो। ऋषिश्वरोंके पवित्र चारित्रको उत्पन्न करनेवाली मुनिसुव्रतनाथ तीर्थेश्वर! आप जयवंत हों ।।५ ।।

देव-समूहके स्वामी इन्द्रो द्वारा पूजित हे नेमिनाथ जिनवर! आप जयशाली रहो । धर्मरुपी रथको चलानेके लिये पहियोंको धुरा समान हे नेमिनाथ जिनेश्वर! आप जयशील हों।

संसार, जालको काटनेके लिये खडगके समान श्री पार्श्वनाथ जिनराज! आप जयवन्त हों एवं तीन लोकमें निर्मल कीर्तिसे बड़े हुए वर्द्धमान (महावीर) तीर्थेश्वर! आपकी सदा जय हों ।।६ ।।

वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु, नंदीश्वरे यानि च मंदरेषु। यावंति चैत्यायतनानि लोके, सर्वाणि वंदे जिनपुङ्गवानां।।1 ।।

अर्थ - भरतादिक सर्व खण्डोंमें, वर्षधर पर्वतोंमें, नंदीश्वरमें, मंदरगिरिमें और इस लोकमें जितने भी तीर्थंकरों के चैत्य स्थान हैं उन सबको मैं वन्दना करता हूँ ।।१ ।।

अवनिल-गतानां-कृत्रिमा-कृत्रिमाणां,
वन-भवन-गतानां-दिव्य-वैमानिकानाम्।
इह-मनुज-कृतानां-देव-राजार्चितानाम्,
जिनवर-निलयानां-भावतोऽहं-स्मरामि।।2 ।।

अर्थ - पृथ्वी पर रहे हुए शाश्वत् और स्थापित किये हुए, वन और भवनमें रहे हुए, दिव्य विमानोंसे रहे हुए ऐसे श्री जिनेश्वर भगवन्तके चैत्योंका मैं भावसे स्मरण करता हूँ ।।२ ।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जंम्बु घातकि पुष्करार्द्ध वसुधा क्षेत्रत्रये, ये भवांश्।
चंद्रांभोज-शिखंडि-कंठ-कनक-प्रावृड्ड-नाभाजिनाः।।
सम्यग्ज्ञान-चरित्र लक्षण धरा दग्धाष्ट कर्मेंधनाः।
भूतानागत वर्तमान समये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः।।3।।

अर्थ - जंबूद्वीप, घातकी खण्ड, और पुष्करार्द्ध इन तीन पृथ्वीके क्षेत्रोंमें उत्पन्न हुये, चन्द्र, कमल, मयूर, कंठ, सुवर्ण और वर्षाऋतुके मेघ जैसी कांतिवाले सम्यग्ज्ञान और चरित्रके लक्षणोंके धारी और अष्ट कर्मरुपी बन्धनोंको जिन्होंने भस्म कर दिये है ऐसे वे भगवन्तको भूत, भविष्य और वर्तमानकाल के भगवन्तको मैं नमस्कार करता हूँ।।३।।

श्रीमन्मैरौ कुलादौ रजत-गिरिवरे शाल्मलौ जम्बूवृक्षे
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकर रुचके कुण्डले मानुषांके।।
इक्ष्वाकारेंऽजनाद्रौ दधि-मुख शिखरे व्यंतरे स्वर्गलोके।
ज्योतिर्लोकेऽभि वंदे भुवन महितले यानि चैत्यालयानि।।4।।

अर्थ - शोभायुक्त मेरु पर्वतपर, कुलपर्वतपर, रजतगिरिपर शाल्मलीवृक्षपर, जंबूवृक्षपर, वक्षार पर्वतपर, चैत्यवृक्षपर, रतिकर पर्वतपर, रुचक पर्वतपर, कुण्डलगिरिपर मानुषोत्तर पर, इक्ष्वाकार पर्वतपर, अंजनगिरिपर, दधिमुख शिखरपर, व्यंतरलोकपर, स्वर्ग लोकपर, ज्योतिष लोकपर, और भुवनतिलकपर जितने चैत्य हैं उन सबकी मैं वन्दना करता हूँ।।४।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

देवा सुरेन्द्र नरनाग समर्चितेभ्यः
पाप प्रणाशकर भव्य मनोहरेभ्यः ।
घंटा ध्वजादि परिवार विभूषितेभ्यो,
नित्यं नमो जगति सर्वजिनालयेभ्यः ।।5।।

अर्थ - देवताओंके इन्द्रों द्वारा, असुरोंके इन्द्रों द्वारा, नर तथा नागदेवताओं द्वारा पूजित, पापका नाश करनेवाले, भव्य मनोहर और घंटा, ध्वजा आदि से भूषित ऐसे जगत में सब जिनालयोंको मैं नित्य नमस्कार करता हूँ।।५।।

द्वौ कुन्देंदु तुषार हार धवलौ, द्वाविंद्र नील प्रभौ,
द्वौ बंधूक समप्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियंगुप्रभौ।
शेषाः षोडश जन्म मृत्यु रहिताः संतप्त हेमप्रभास्,
ते संज्ञान दिवाकराः सुरनुताः सिध्दिं प्रयच्छंतु नः ।।6।।

अर्थ - दो तीर्थंकर (चन्द्रप्रभु और सुविधिनाथ) कुन्द पुष्प चंद्र, र्वफ और मोतीके हार जैसे उज्वल हैं। दो तीर्थंकर (मल्लिनाथ और पार्श्वनाथ) इन्द्रनील मणि जैसे वर्णवाले हैं। दो तीर्थंकर (पद्मप्रभु और वासुपूज्य) बंधूकके वर्णवाले हैं ।दो तीर्थंकर (मुनिसुव्रत तथा नेमिनाथ) प्रियंगु पुष्प जैसी कांतिवाले है और शेष १६ तीर्थंकर तपे हुए सुवर्ण जैसी कांतिवाले हैं। ऐसे इन जन्म मरणसे रहित, ज्ञानके सूर्य जैसे और देवताओं से स्तुत्य सभी तीर्थंकर हमें सिद्धि दें ।।६।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इच्छामि भंते! चेइय भत्ति काउसग्गो कओ, तस्सालोचेउं। अहलोय तिरियलोय उड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि-जिण-चेइयाणि ताणि सव्वाणि तीसुवि लोएसु। भवण वासियः वाण-विंतर-जोइसिय कप्पवासियत्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण ण्हाणेण, दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण धूवेण, दिव्वेण चुण्णेण दिव्वेण वासेण, णिच्चकालं अंच्चंति, वंदंति णमंसंति, अहमवि इह संतो तत्थ संताइं, णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमंसामि, दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।।

अर्थ - हे भगवन्! चैत्यभक्ति और कायोत्सर्ग करनेकी इच्छा करता हूँ तथा आलोचना करनेका इच्छुक हूँ। जो अधोलोक, तिर्यक्लोक तथा उर्द्धलोकमें शाश्वत और स्थापित ऐसे जो २ जिन चैत्य हैं उनको, सब तीन लोकमें भवनवासी, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी कल्पवासी ये चार प्रकारके देवतागण परिवार सहित दिव्य गंधसे, दिव्य पुष्पसे, दिव्य धूपसे, दिव्यचूर्णसे, दिव्य वाससे, दिव्य द्रव्यसे, तीनो काल अर्चा करते हैं, पूजन करते हैं और नमस्कार करते हैं तथा जो जिन प्रतिमाएं उनमें स्थित हैं उनकी मैं तीनोकाल अर्चा करता हूँ, वन्दना करता हूँ और नमस्कार करता हूँ। इस प्रकार करने से हमको दु:ख का क्षय, कर्मका क्षय, बोधिलाभ, अच्छी गतिमें गमन, समाधिमरण और जिनगुण की प्राप्ति हो।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अथ पौर्वाह्निक माध्यान्हिक, अपरान्हिक देववंदनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल कर्म क्षयार्थं भावपूजा वंदना स्तव समेतं पंचगुरुभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं ।।

अर्थ - अब दिनके प्रात: मध्यान्ह सायंकाल प्रथम भागमें देववंदना करने के लिये पूर्वाचार्योंके अनुक्रमसे सर्व कर्मोंके क्षयार्थ भाव-पूजा और वंदना करने के स्तवन सहित पंच गुरुभक्तिरूप कार्योत्सर्ग मैं करता हूँ।

णमो अरिहंताणं, आदि मंत्र ९ बार पढ़ें फिर चत्तारि मङ्गलम् पृ. २० से, पृ. २४ तक त्रि:परीत्य नमाम्यहम् तक पढ़े।

प्रातिहार्यो जिनानसिद्धान्गुणै: सूरिन् स्वमातृभि:।
पाठकान् विनयै: साधून् योगांगैरष्टभि: स्तुवे ।।1।।

अर्थ - अष्ट प्रकारके प्रातिहार्य से जिन भगवंतका, अष्ट गुणोंसे सिद्ध पुरुषोंका तथा अष्ट प्रवचन-माताओंसे आचार्योंका तथा अष्टांग विनयसे उपाध्यायका तथा आठ प्रकारके योगके अङ्गोंसे साधुओंका स्तवन करता हूँ ।।१ ।।

मणुय णा इंद सुर धरिय छत्तत्तया;
पंच कल्लाण सोक्खावली पत्तया।
दंसणंणाण झाणं अणंतं बलं,
ते जिणा दिंतु अम्हं वरं मङ्गलम् ।।2।।

अर्थ - हे जिन अरहंत हमको वर अर्थात् श्रेष्ठ मंगल हैं, वै कैसे हैं— मनुष्य, नागेन्द्र, सुर इन तीन लोकके प्राणियोंने जिनको तीन छत्र धरे हैं। गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान और निर्वाण ये पाँच कल्याणक को और उन सम्बन्धी जो सुखकी आवली उसको प्राप्त हुए हैं तथा दर्शन, ज्ञान, ध्यान (सुख) और वीर्य ये अनंत चतुष्टय जिनको प्राप्त हैं ऐसे है ।।२।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जेहि झाणग्गि वाणेहिं अइदड्ढयं
जम्म जर मरण णय रत्तयं दड्ढयं।
जेहिं पत्तं सिवं सासयं ठाणयं,
ते महं दिंतु सिद्धा वरं णाणयं ।।३।।

अर्थ - वे सिद्ध परमेष्ठी मुझे वर (श्रेष्ठ) ज्ञान दें। वे कैसे हैं जिन्होने ध्यान रुपी अग्नि बाणसे जन्म जरा मरणरुपी तीन नगर दग्ध किये हैं, जो शाश्वत् स्थान अर्थात् मोक्ष को पाया है ऐसे सिध्द परमेष्ठी हैं।।३।।

पंच आचार पंचग्गि संसाहया,
बार संगाइ सुअ जलहि अवगाहया।
मोक्ख लच्छी महन्ती महं ते सया,
सुरिणो दिंतु मोक्खं गया संगया ।।4।।

अर्थ - ऐसे आचार्य परमेष्ठी मुझे मोक्ष लक्ष्मी दें। वे कैसे हैं-दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तप और वीर्य इन पंचाचाररुपी अग्निके साधक है, बारह अङ्गरुपी श्रुतके समुद्र जलको अवगाहनेवाले है। मोक्षकी एक देश कर्मनिर्जरा को सदा प्राप्त हुऐ है ऐसे आचार्य परमेष्ठी हैं।।४।।

घोर संसार भीमाडवी काणणे,
तिक्ख विय रालणह पाव पंचाणणे।
णट्ठ मग्गाण जीवाण पहदेसिया,
वन्दिमो ते उवज्झाय अम्हे सया ।।५।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ - सामायिक कर्ता श्री उपाध्याय परमेष्ठी हम वन्दना करते है। वे कैसे है-विकराल सिंहों से मुक्त संसाररुपी भयानक वनमे भ्रमण करनेवाला जो उद्यान हैं उसमें भूले मार्ग बतानेवाले हैं।।५।।

उग्ग तव चरण करणेहिं झिणं गया,
धम्मवर झाण सुकेक्क झाणं गया।
णिव्भरं तवसिरी ये समा लिंगया,
साहवो ते महा मोक्ख पह मग्गया।।६।।

अर्थ - ऐसे साधु परमेष्ठी हैं वे मुझे मोक्षमार्ग दिखानेवाले हों। वे कैसे हैं, उग्र तपश्चरण द्वारा जिनका शरीर क्षीण हो गया है और धर्म श्रेष्ठ ध्यान तथा शुक्ल ध्यानको प्राप्त हुऐ हैं तथा अतरंग लक्ष्मीसे युक्त है ऐसे साधु परमेष्ठी हैं।

एण थोत्तेण जो पंचगुरु वन्दए।
गुरुय संसार घणवेल्लि सो छिंदए।।
लहइ सो सिद्धसोक्खाइ बहुमाणणं।
कुणइ कम्मिधणं पुंज-पज्जालणं।।7।।

अर्थ - जो पुरुष इस स्तोत्र से पंचपरमेष्ठी गुरुकी वंदना करते हैं वे संसाररुप सघन वेलको छेदते हैं और मोक्ष-सुखको पाते हैं और अन्य पद पाकर मोक्षके प्रतिपक्षी कर्मरुपी बन्धनके पुंजको जला देते हैं।।७।।

अरुहा सिद्धाइरिया उवज्झायासाहू पंचपरमेट्ठी।
एयाण णमुक्कारा भवे भवे मम सुहं दिंतु।।

अर्थ - अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु ये पंचपरमेष्ठी हैं, उनको नमस्कार हो, वे भवो-भवमें मुझे सुख देवें।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इच्छामि भंते! पंचगुरुभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं अट्ठ महापाडिहेर संजुत्ताणं, अरहंताणं अट्ठगुण सम्पण्णाणं उड्ढलोय मत्थयाम्मि पयंट्ठियाणं सिद्धाणं, अट्ठपवयण माउसंजुत्ताणं आइरियाणं, आयारादि सुदणाणो वदेसयाणं उवज्झायाणं, तिरयण गुण पालण रयाणं सव्वसाहूणं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वन्दामि णमंसामि, दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो, सुगइगमणं समाहिमरणं, जिणगुणसम्पत्ति होउ मज्झं।।

अर्थ - हे भदंत! पंच गुरुभक्ति का कार्योत्सर्ग करनेकी आलोचना करनेकी मैं इच्छा करता हूं। अष्ट महा प्रातिहार्योंसे युक्त ऐसे अरिहंत भगवंत को, अष्ट गुणोंसे सम्पूर्ण ऐसे और ऊर्ध्व लोक स्थानवाले सिद्धोंको, अष्ट प्रवचन मार्गसे युक्त ऐसे आचार्योंको, आचारादिकके शुद्ध ज्ञान का उपदेश देनेवाले ऐसे उपाध्यायोंको और ज्ञानदर्शन तथा चारित्ररुपी तीन रत्नत्रय गुणको पालनेमें तत्पर ऐसे सर्वसाधुओकी अर्चना करता हूँ, पूजता हूँ, वंदना करता हूँ, इस कारणसे समाधिसे (समाधिमरण) और जिनगुण सम्पत्ति की प्राप्ती हो।

अथ पौर्वान्हिक देव वन्दनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल कर्म क्षयार्थं भावपूजावन्दनास्तव समेतं श्रीशांतिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम।

अर्थ - अब प्रात: मध्यान्ह, सायंकाल देव वंदनामें पूर्वाचार्योंके क्रमसे सब कर्मोंके क्षयार्थ भाव पूजा वंदना सहित शांतिभक्ति का कायोत्सर्ग करता हूँ।

(नौ बार णमोकार मंत्र पढ़े)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शांतिपाठ

शांतिजिनं शशि निर्मल वक्त्रं,
शील गुणव्रत संयम पात्रम्।
अष्ट शतार्चित लक्षण गात्रं,
नौमि जिनोत्तम मंबुजनेत्रम् ।।१।।

अर्थ - चन्द्र जैसे निर्मल मुखवाले, व्रत और संयमके पात्ररुप गात्रमें १०८ लक्षणोसे युक्त और कमल जैसे नेत्रवाले सर्व जिनोत्तम श्री शांतिनाथ भगवंतको मैं नमस्कार करता हूं।।१।।

पंचम मिप्सित चक्र धराणां
पूजित मिंद्र नरेन्द्र गणैश्च।
शांतिकरं गण शांति मभीप्सु:
षोडश तीर्थंकर प्रणमामि ।।२।।

अर्थ - इच्छित मनोरथ को देनेवाले, चक्रवर्तीयोंमें पांचवें इन्द्र नरेन्द्रोंके समूहसे पूजित और शांतिको करनेवाले सोलहवे तीर्थंकर श्री शांतिनाथ भगवन्त को गुणकी शांतिकी इच्छासे मैं प्रणाम करता हूँ।।२।।

दिव्यतरू: सुरपुष्प सु वृष्टिर्
दुन्दुभि रासन योजन घोषौ:।
आतप वारण चामर युग्मे
यस्य विभाति च मंडलतेज: ।।३।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ - दिव्य वृक्ष, देव पुष्पोंकी वृष्टि, दुन्दुभि, आसन, योजन तक घोष (नाद), छत्र, दो चमर और भामंडल जिनके आगे शोभायमान हो रहे हैं ।।३ ।।

तं जगदर्चित शांति जिनेन्द्र
शांतिकरं शिरसा प्रणमामि ।
सर्व गणाय तु यच्छतु, शांतिं,
मह्यमरं पठते परमां च ।।४।।

अर्थ - सम्पूर्ण जगत में पूज्य और शांतिको करनवाले श्री शांतिनाथ जिनेन्द्र को मैं नतमस्तक से प्रणाम करता हूँ। हे शांतिनाथ प्रभु संघगणको तथा मुझे परम तत्काल शांति दें ।।४ ।।

येऽभ्यर्चिता मुकुट कुण्डल हार रत्नै:
शक्रादिभि: सुरगणै: स्तुत पादपद्मा: ।
ते मे जिना: प्रवर वंश जगत्प्रदीपा:
तीर्थंकरा: सतत शांतिकरा भवंतु ।।५ ।।

अर्थ - मुकुट, कुण्डल, हार और रत्नोंसे युक्त इन्द्रादिकोंने जिनकी पूजा की है और देवतागणने जिनके चरणकमलकी पूजा की है और जो अपने उत्तम वंशसे जगतमें दीपकरुप हैं। ऐसे वे तीर्थङ्कर जिन भगवन्त मुझे हमेशा शांति करनेवाले हों ।।५ ।।

संपूजकानां प्रतिपालकानां,
यतीन्द्र सामान्य तपो धनानाम् ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञ: ।
करोतु शांतिं भगवान् जिनेंद्र: ।।6।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ - पूजन करनेवालोंको, पालन करनेवालोंको, यतीन्द्रोंकी सामान्य तपस्वीयोंको, देशको, राष्ट्रको, नगरको और राजाको श्री जिनेन्द्र भगवान शांति करें ।।६।।

क्षेमं सर्व प्रजानां प्रभवतु बलवान्
धार्मिको भूमिपाल।
काले काले च सम्यक् वर्षतु
मघवा व्याधयो यांतु नाशम्।
दुर्भिक्षं चौरमारिः क्षणमपि
जगतां मास्म भूज्जीव लोके ।
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु
सततं सर्वसौख्यप्रदायि ।।8।।

अर्थ - सर्व प्रजाका भला हो, राजा धार्मिक और बलवान हो, वर्षा अपने समयमें अच्छी तरहसे हो, व्याधियोंका नाश हो, जगत में जीवलोक में दुष्काल, चोरी या महामारी (रोगोपद्रव) एक क्षणके लिए भी न हों। सब सुखको देनेवाले जिनेश्वर धर्म चक्र हमेशा समर्थनपनसे प्रवृत्त हो ।।८।।

प्रध्वस्त घाति कर्माणः केवल ज्ञान भास्कराः।
कुर्वंतु जगतांः शांतिं वृषभाद्या जिनेश्वराः।।9।।

अर्थ - घातीया कर्मका नाश करनेवाले, केवलज्ञानको प्रकाश करनेवाले, सूर्यरुप ऐसे ऋषभादिक चौबीस तीर्थङ्कर जगतमें शांति करे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इच्छामि भंते! शांतिभत्ति, काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं पंचमहाकल्लाण संपण्णाणं, अट्ठमहा पाडिहेर सहियाणं चउतीसातिशय विसेससंजुत्ताणं बत्तीस देविद मणि मउड मत्थय महियाणं बलदेव वासुदेव चक्कहर रिसि मुणि जदि अणागारोवगूढाणं थुइ सहस्स णिलयाणं उसहाइवीर पच्छिम मंगल महा पुरिसाणं, णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं, समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।।

अर्थ - हे भदंत ! शांति भक्ति करने के लिये तथा उनकी आलोचना करने के लिये मैं इच्छा करता हूँ। पंच महाकल्याणकोंसे संपन्न अष्ट प्रातिहार्य सहित, चौतिस अतिशय युक्त, बत्तीस प्रकार के इन्द्र और छत्रधारी राजाओंसे पूजित बलदेव, वासुदेव, चक्रवर्ती, ऋषिगण, मुनिगण, यतिगण और अनगारोंसे सेवित सैंकडों और हजारों स्तुतियोंसे स्तुत्य ऐसे ऋषभादिक से वीर भगवंत तक सर्व मंगलकारक महापुरुषोंको मैं तीनो में काल अर्चता हूँ, पूजता हूँ, वंदन करता हूँ और नमस्कार करता हूँ। जिससे दुःखोंका क्षय, कर्मोका क्षय, बोधिलाभ, अच्छी गतिमें गमन, समाधिमरण और जिनगुण सम्पत्ति प्राप्ति हो।

अर्थ पौर्वाह्निक, माध्यान्हिक, अपरान्हिक देववन्दना क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भाव पूजा वन्दना स्तव समेतं श्रीचैत्यपंचगुरु शांतिभक्तिकृत्वां तद्धिनाधिकत्वादिदोष विशुद्ध्यर्थं आत्म पवित्रीकरणार्थ समाधि भक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहं।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ - प्रातः, मध्यान्, सायंकाल, में देव-वंदनाके लिये पूर्वाचार्योंके अनुक्रमण से, सब कर्मोंके क्षय के लिये भावपूजा वंदना और स्तवन सहित चैत्य तथा पंचगुरुभक्ति, शांतिभक्ति करके अब उसमें जो कुछ न्यूनाधिक दोष हुआ हो तो उसकी शुद्धिके लिये तथा अपने आत्मा को पवित्र करने के लिये मैं समाधिभक्ति का कायोत्सर्ग करता हूं।

(णमो अरिहंताणं जाप्य ९ श्वासोच्छवास २७ सहित)

अथेष्टप्रार्थना – प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः।

अर्थ - अब इष्ट प्रार्थना करते हैं – प्रथमानुयोगको करणानुयोगको, चरणानुयोगको और द्रव्यानुयोगको नमस्कार करता हूं।

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगतिः सर्वदार्यैः।
सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् ।।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वें।
संपद्यतां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ।।१।।

अर्थ - जिनशास्त्रका अध्ययन, जिनभगवन्तकी स्तुति नित्य सत्पुरुषोंका समागम, सदाचारी पुरुषोंके गुणगणकी प्रशंसा, दोष कहनेमें मौनपना, सबको प्रिय और हितमित वचन कहना और आत्मतत्वमें भावना, ये सब जहां तक मोक्ष न हो वहां तक मुझे भव भवमें प्राप्त हो।

तव पादौ मम हृदये मम हृदये तव पदद्वये लीनम्।
तिष्ठतु जिनेन्द्र तावद्यावन्निर्वाणसंप्राप्तिः।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ - जिनेन्द्र! जहां तक मोक्षकी प्राप्ति हो वहां तक आपके चरण मेरे हृदय में लीन हों और मेरा हृदय आपके दोनों चरणोंमें लीन हों।

अक्खर पयत्थ हीणं मत्ताहीणं च जं मये भणियं।
तं खउ णाण देवय मज्झय दुक्खक्खयं दिंतु ।।1।।

अर्थ - जो कुछ अक्षर पद और मात्रासे हीन ऐसे मेरे से पढ़ा गया हो वह ज्ञान देवता मुझे क्षमा करें और मेरे दुःख का क्षय करें ।।१।।

नमः श्री आचार्य वंदनायां सिद्धभक्तिकार्योत्सर्गं करोम्यहं।

अर्थ - अब आचार्योंकी वंदनामें सिद्ध-भक्ति का कायोत्सर्ग करता हूँ।

(यहां णमोकार मंत्र ९ बार २७ श्वासोच्छवास सहित पढ़े।)

तवसिद्धें णयसिद्धे संयमसिद्धे चरितसिद्धे य।
णाणम्मि दंसणंम्मिय सिद्धे सिरसा णमंसामि।।१।।

अर्थ - तप से सिद्ध, नय से सिद्ध, संयम से सिद्ध, चारित्र करके सिद्ध, ज्ञान से सिद्ध और दर्शन से सिद्ध ऐसे उन महात्माओंको मैं नमस्कार करता हूँ।।१।।

समत्तणाणदंसण वीरियसुहमं तहेव अवगहणं
अगुरुलघुमव्वावाहं अट्ठगुणाहोंति सिद्धाणं ।।2।।

अर्थ - सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, वीर्य, अनंत बल, अनंतसुख, अवगाहनत्व गुण, गुरुता और लघुताका अभाव, ये आठ गुण सिद्ध पुरुषके होते हैं।।२।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(नमोस्तु आचार्यवंदनायां श्रुतभक्तिकायोत्सर्ग करोम्यहं)

अर्थ - नमस्कार हो, आचार्य वंदनामें श्रुतभक्ति का कायोत्सर्ग मैं करता हूँ।

णमोंकार मंत्र ९ बार २७ श्वासोच्छवास सहित पढ़े ।

कोटीशतं द्वादश चैव कोटयो
लक्षाण्यशीतिस्त्र्यधिकानि चैव।
पंचाशदष्टौ च सहस्त्रसंख्यामेतच्छुतं
पंचपदं नमामि ।।१।।

अर्थ - एकसौ बारह करोड़ तिरासी लाख अठावन हजार संख्यावाले पंच पद ज्ञानको मैं नमस्कार करता हूँ।

अरहंतभासियत्थं गणधरदेवे हिं गन्थियं सम्मं ।
पणमामिभत्तिजुत्तो सुदणाणमहोवहिं सिरसा।।२।।

अर्थ - अर्हंत भगवान ने कहा हुआ और गणधर देवने गूंथा हुआ ऐसा शुद्ध ज्ञानरुपी बड़ा समुद्र उसको, भक्तिसे युक्त मैं मस्तक नमाकर प्रणाम करता हूँ।

(नमोस्तु आचार्यवंदनायां आचार्यभक्ति कार्योत्सर्ग करोम्यहं)

अर्थ - नमस्कार हो। अब मैं आचार्य वंदनामें आचार्य भक्ति कायोत्सर्ग करता हूँ।।३।।

णमोंकार मंत्र ९ बार २७ श्वासोच्छवास सहित पढ़े ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्रुतजलधिपारगेभ्य:
स्वपरमतविभावनापटुमतिभ्य:।
सुचरित तपो निधिभ्यो
नमो गुरुभ्यो गुणगुरुभ्य: ।।१।।

अर्थ - शास्त्ररुप समुद्रको पार पाये हुये, अपने और दुसरोंके मतको जानने में चतुर बुद्धिवाले, अच्छा चारित्र और तपके भंडाररुप तथा गुणोंसे बड़े ऐसे आचार्य गुरुको मैं नमस्कार करता हूँ ।।१।।

छत्तीसगुणसमग्गे पंचविहाचारकरणसंदरिसे।
सिस्साणुग्गहकुसले धम्माइरिए सदा वंदे ।।२।।

अर्थ - छत्तीस गुणोंसे युक्त, पांच प्रकारके आचारको बतानेवाले और शिष्योंका अनुग्रह करनेमें कुशल ऐसे धर्माचार्यकी मैं हमेशा वंदना करता हूँ।।२।।

गुरुभत्तिसंजमेण य तरंति संसारसायरं घोरम्।
छिण्णंति अट्ठकम्मं जम्मणमरणं पावंतिं।।३।।

अर्थ - भव्य प्राणी गुरुभक्ति संयमसे इस घोर संसाररुपी सागरको तर जाते हैं, अष्ट कर्मोंको छेदते हैं और फिर जन्म मरणको प्राप्त नहीं होते ।।३।।

ये नित्यं व्रतमंत्र होम निरता ध्यानाग्नि होत्राकुला:।
षट्कर्माभिरतास्तपोधनधना: साधुक्रिया साधव: ।
शीलप्रावरणा गुण प्रहरणाश्चन्द्रार्कतेजोऽधिका
मोक्षद्वारकपाटपाटनभटा: प्रीणंतुमांम् साधव: ।।४।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ - जो नित्य व्रत मन्त्ररुप होम में तत्पर हैं, ध्यानरुपी अग्निहोत्र में आनुकुल हैं, षट्कर्ममें लवलीन हैं, तपरुपी धनसे धनवान हैं, साधुकी क्रियाओंको साधनेवाले हैं, शीलरुपी कवच को धारण करनेवाले हैं, गुणरुपी शस्त्रोंको रखनेवाले हैं, चंद्र और सूर्यके तेजसे भी अधिक और मोक्षके द्वारको तोडनेमें शूरवीर हैं, ऐसे ये साधु मुझ से प्रसन्न हो ।।४।,

गुरुवः पांतु नो नित्यं ज्ञानदर्शननायकाः।
चारित्रार्णवगम्भीराः मोक्षमार्गोपदेशकाः ।।5।।

अर्थ - ज्ञान तथा दर्शनके नायक, चारित्ररुपी समुद्रसे गम्भीर और मोक्ष-मार्गका उपदेश करनेवाले ऐसे गुरु हमारी रक्षा करें।

इच्छामि भंते ! आइरिय-भक्ति-काउस्सगो कओ, तस्सा लोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण सम्मचारित्त जुत्ताणं पंच विहाचाराणं, आइयाणं आयारादि-सुद-णाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं; ति-रयण-गुण-पालण रयाणं सव्वसाहूणं; णिच्चकालं अच्चेमि, पूज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइगमणं, समाहिमरणं-जिण-गुण संपत्ति होउ मज्झं।।।५।।

।।इति बृहत् सामायिक समाप्तम्।।

णमोकार मन्त्र १०८ बार गिनकर फिर खडे हो जावे और इस प्रकार पढ़े— फिर ९ वार णमोकार मन्त्र चारों दिशाओंमें पढ़करके तीन२ आवर्त और एक२ शिरोनति करे, फिर आलोचना पाठ और मिच्छामि दुक्कडं पढ़े।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लघु प्रतिक्रमण

ॐ नम: सिद्धेभ्य: ३ ।

चिदानंदैकरुपाय, जिनाय परमात्मने ।
परमात्मप्रकाशाय, नित्यं सिद्धात्मने नमः।।

इतर निगोद सात लाख, नित्य निगोद सात लाख, पृथ्वीकाय सात लाख, अपकाय सात लाख, तेजकाय सात लाख, वायुकाय सात लाख, वनस्पतिकाय-दश लाख, बे इन्द्रिय दोय लाख, त्रीइन्द्रिय दोय लाख, चौ इंद्रिय दोय लाख नरकगति चार लाख, देवगति चार लाख, तिर्यंचगति चार लाख, मनुष्यगति चौदा लाख, ऐव काये चौरासी लाख, मातापक्षे पितापक्षे एकसौ सांठ निन्यानवे लक्ष कुल कोटी लक्ष सुक्षम बादर पर्याप्त अपर्याप्त लब्धि पर्याप्त कोई जीवनी विराधना करी होय, रागद्वेष करीने पाप लाग्यो होय-तस्स मिच्छामि दुक्कडं

पांच मिथ्यात्त्व, बार अविरत, पंदर योग, पच्चीस कषाय, एवं सत्तावन आस्त्रव करी पापन लाग्यो होय तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

तीन दण्ड, तीन शल्य, तीन गर्व करीने पाप लाग्यो होय-तस्स मिच्छामि दुक्कडम्।

राज कथा, चोर कथा, स्त्री कथा, भोजन कथा करीने पाप लाग्यो होय– तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

चार आर्तध्यान, चार रौद्रध्यान करीने पाप लाग्यो होय तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आचार अनाचार करीने पाप लाग्यो होय – तस्स मिच्छामिदुक्कडं।

पंच मिथ्यात्व करीने पाप लाग्यो होय - तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

पंच आस्त्रव करीने पाप लाग्यो होय - तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

पंच छट्ठा, व्रत छट्ठा, त्रस जीवनी विराधना करीने पाप लाग्यो होय – तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

सप्त व्यसन सेवे करीने पाप लाग्यो होय – तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

सप्त भय करीने पाप लाग्यो होय – तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

अष्ट मूलगुण व्रतना अतिचार करीने पाप लाग्यो होय - तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

दस प्रकारनां व्रतना अतिचार करीने पाप लाग्यो होय - तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

चौद प्रकारना अन्तरङ्ग परिग्रह करीने पाप लाग्यो होय - तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

चौद प्रकारना अन्तरङ्ग परिग्रह करीने पाप लाग्यो होय - तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

पन्दर प्रमाद करीने पाप लाग्यो होय – तस्य मिच्छमि दुक्कडं।

पच्चीस कषाय करीने पाप लाग्यो होय – तस्य मिच्छमि दुक्कडं।

पंच अतीचार करीने पाप लाग्यो होय – तस्य मिच्छमि दुक्कडं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मारी समक्ष नहीं करीने पाप लाग्यो होय – तस्य मिच्छामि दुक्कडं।

रौद्र परिणामना दुचिंतवन करीने पाप लाग्यो होय – तस्य मिच्छमि दुक्कडं ।

हेंडता, हालता, बोलता, चालता, सुता, बेसता मार्गने विष जाणे अनजाणे दीठे अणदीठे कई पाप लाग्यो होय तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

सुक्ष्म बादर कोइ जीव चंपायो होय, भय पाम्यो होय, त्रास पाम्यो होय, वेदना पाम्यो होय छेदना पाम्यो होय – तस्स मिच्छामि दुक्कडं

यति सर्वे मुनि – आर्यिका, श्रावक श्राविकानी,

सर्वे प्रकारे निंदा करी होय, करावी होय, सांभली होय, संभलावी होय, पराई निंदा करीने पाप लाग्यो होय – तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

देवगुरु शास्त्रनो अविनय थयो होय – तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

निर्माल्य द्रव्यना पाप लाग्यो होय – तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

बत्रीस प्रकारना सामायिकना दोष लाग्या होय – तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

पंच इन्द्रिय व छट्ठो विषय मन करीने पाप लाग्यो होय – तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

जाणे अनजाणे कई पाप लाग्यो होय – तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

मारे कोई साथे राग नथी, द्वेष नहीं, वैर नहीं, मान नहीं, माया नहीं, मारे समस्त जीव साथे उत्तम क्षमा कर्मक्षयनता, समाधिमरण, चारों गतिका दुःख निवारण हो।

सोऽहं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अथ श्रावक-प्रतिक्रमण्

जीवे प्रमाद-जनिताः प्रचुराः प्रदोषा,
यस्मात्प्रतिक्रमणतः प्रलयं प्रयान्ति ।
तस्मात्तदर्थममलं गृहि-बोधनार्थं,
वक्ष्ये विचित्र-भव-कर्म-विशोधनार्थम्।।1।।

अर्थ - जीव प्रमाद और अज्ञानतासे अनन्त दोष (पापकर्म) करता हैं। प्रतिक्रमण करनेसे उन दोषोंसे शांति हो जाती है इसलिये कृत-कर्मोंकी शुद्धिके लिय यह प्रतिक्रमण का स्वरुप गृहस्थोंके लिए प्रतिपादन किया जाता है।

पापिष्ठेन दुरात्मना जड़धिया मायाविना लोभिना,
रागद्वेष-मलीमसेन मनसा दुष्कर्म यन्निर्मितम्।
त्रैलोक्याधिपते! जिनेन्द्र! भवतः श्रीपादमूलेऽधुना,
निन्दापूर्वमहं जहामि सततं वर्वर्तिषुः सत्पथे ।।2।।

अर्थ - हे त्रैलोक्य प्रभो! हे जिनेन्द्र! मैं बड़ा पापी, दुष्ट,अज्ञानी, मायाचारी और लोभी हूँ! मैंने अपने मनको राग, द्वेषसे मलिन कर अनन्त दुष्कर्मं किये है। हे जिनराज! अब मैं आपके चरण-कमलोंकी शरण लेकर आपके समक्ष उपस्थित हुआ हूँ, और सन्मार्ग में चलनेके लिये बाध्य होता हूँ तथा भविष्यमें भी मुझसे कुत्सित कर्म न हो, ऐसी मेरी इच्छा है।

खम्मामि सव्वजीवाणं, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मेत्ती मे सव्वभूदेसु, वैरं मज्झं ण केण वि ।।3।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ - मैं समस्त जीवोंको क्षमा करता हूँ, और मुझे भी सब जीव क्षमा करें, मेरी समस्त जीवमात्रसें मित्रता हो, मेरे साथ किसीका भी वैर नहीं हैं।

रागबन्धपदोसं च, हरिसं दीणभावयं।
उस्सुगत्तं भयं सोगं, रदिमरदिं च वोस्सरे ।।४।।

अर्थ - मैं रागसे किया हुआ कर्मबंध, अनिष्ट संयोग और इष्ट वियोग होनेसे उत्पन्न हुआ द्वेष, विषय प्राप्ति से उत्पन्न हुई दीनता, अभिमानसे उत्पन्न हुई मदोन्मत्तता, इस लोक और परलोक सम्बंधी भय, इष्ट वियोगसे उत्पन्न हुआ शोक परवस्तुकी आकांक्षारुप मनोविकारसे उत्पन्न हुआ रतिभाव और अरतिभाव आदि समस्त विकारभावोंको छोडता हूँ।

हा दुट्ठ-कयं हा! दुट्ठ-चिंतियं, भासियं च हा दुट्ठं
अंतो अंतो डज्झम्मि पच्छत्तावेण वेदंतो ।।5।।

अर्थ - हाय! हाय! मैंने दुष्ट कर्म किये, हाय! हाय! दुष्ट कर्मोका बारंबार चिंतवन किया । हाय! हाय !मैंने दुष्ट मर्मभेदक वचन कहे। इस प्रकार मन, वचन और कायकी दुष्टतासे मैंने अनंत कुत्सित कर्म किये। इन कार्योंके बदले अब मुझे अत्यंत पश्चाताप होता हैं और इस अज्ञान दशासे मेरा अंत:करण अत्यन्त क्लेशित हो रहा है।

दव्वे खेत्ते काले, भावे य कदा वराह-सोहणयं।
णिंदण-गरहण-जुत्तो, मण-वच-कायेण पडिक्कमणं।।6।।

अर्थ - द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावके निमित्तसे किसी जीवकी विराधना अथवा प्राणपीडा हुई हो वह मैं आत्मनिंदा और गर्हापूर्वक मन, वचन, कायकी शुद्धिसे परित्याग करता हूँ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एइंदिया बेइंदिया तेइंदिया चउरिंदिया पंचिंदिया पुढविकाइया आउकाइया तेउकाइया वाउकाइया-वणप्फदिकाइया तसकाइया एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।7।।

अर्थ - एकेन्द्रिय, दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय, पांच इन्द्रिय जीव, पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय और त्रस कायके जीवोंको मैंने स्वत: मारा हों, दूसरे से मरवाया हों, अन्यके मरने पर अनुमोदना की हो, अथवा उक्त प्रकारके जीवोंको संताप दिया हो, दूसरेसे संताप दिलाया हो, अन्यके संतापित करनेमें सहमत हुआ हो। अथवा प्राणियोंके अंगोपांगका वियोग किया हो, कराया हो करनेको भला माना हो इत्यादि अनेक प्रकार से मुझसे जिन जीवोंको पीडा हुई हैं, उनसे उत्पन्न हुये पापकर्मोंका परित्याग करता हूँ। मन, वचन, काय और कृत कारित अनुमोदनासे जिन जीवोंका घात मुझ से हुआ हैं वह मिथ्या हो।।७।।

दंसण-वय-सामाइय, पोसह-सचित्त-राइभत्ते य।
बंभाऽरंभ-परिग्गह, अणुमणुमुद्दिट्ठ-देसविरदो य ।
एयासु यथा कहिद पडिमासु पमादाइकया ।
इचार, सोहणट्ठ छेदोवट्ठावणं होउ मज्झं ।।8।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ - १; दर्शन २; व्रत ३; सामायिक ४; प्रोषधोपवास ५; सचित्त त्याग ६; रात्रिभुक्तत्याग ७; ब्रह्मचर्य ८; आरंभत्याग ९; परिग्रहत्याग १०; अनुमतित्याग ११; और उद्दिष्टत्याग इस प्रकार श्रावककी ग्यारह प्रतिमाएं होती हैं।

इन प्रतिमाओंका व्यक्तरुप अथवा समस्तरुप अभ्यासरुप अथवा व्रतरुप पालन पाक्षिक; नैष्ठिक श्रावक करते हैं। प्रतिमा धारणा चाहे किसी प्रकारसे हो, परन्तु सम्भव हैं कि प्रमाद और अज्ञानसे अतीचार अथवा व्रतभंगरुप दोष लगे हों, उनकी मैं उपस्थापना करता हूं।।८।।

अथ दैवसिय (राइय) पडिक्कमणए सव्वाइचार-विसोहि-णिमित्तं पुव्वाइरिय कमेण आलोयण-सिद्ध-भत्ति-काउस्सग्गं करोमि।।9।।

अर्थ - दिवस सम्बन्धी शारीरिक, मानसिक और वाचनिक कार्य करनेमें जो दोष मैंने किये हों, उनका प्रतिक्रमण करता हूं। और अपने मनकी विशुद्धिके लिये अपने किये हुए दोषोंकी बार-बार आलोचना करता हूं। दोषोंसे सर्वथा मुक्त श्री सिध्द परमात्माका स्वरुप चिन्तवन कर सिध्द भक्तिमें लीन होतां हूँ।।९।।

सामायिक दण्डक

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।10।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चत्तारि-मंगलं-अरिहंता मंगलं, सिध्दा मंगलं, साहू मंगलं, केवलि-पण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा-अरहन्ता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, सोहू लोगुत्तमा, केवलि-पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा।। चत्तारि शरणं पव्वज्जामि, अरहन्ते शरणं पव्वज्जामि, सिध्दे शरणं पव्वज्जामि, साहू शरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णतं धम्मो शरणं पव्वज्जामि।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णारस-कम्मभूमिसु जावअरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिध्दाणं, बुध्दाणं परिणिव्वुदाणं, अंतयडाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्म-देसगाणं, धम्मणायगाणं, धम्मवर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहि-देवाणं, णाणाणं दंसणाणं, चरित्ताणं, सदा करेमि किरियम्मं। करेमि भंते! सामाइयं सव्व-सावज्ज-जोगं पच्चक्खामि जावज्जीवं तिविहेण-मणसा, वचसा, काएण, ण करेमि, ण कारेमि, ण अण्णं करंतं पि समणुमणासि तस्स भंते! अइचारं पडिक्कम्मामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं, जाव-अरहंताणं, भतवंताणं, पज्जुवासं करेमि, तावकालं पावकम्मं, दुच्चरियं वोस्सरामि।।10।।

अर्थ - केवलीका प्ररुपण किया हुआ धर्म मंगल है। चार लोकोत्तम हैं – अरिहंत लोकोत्तम, सिद्ध लोकोत्तम, साधु लोकोत्तम, केवली भगवान का

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्ररुपण किया हुआ धर्म लोकोत्तम इन चारोंकी शरणमें मैं जाता हूँ। अरिहंतकी शरणमें जाता हूँ, सिद्धकी शरणमें जाता हूँ, केवली भगवान के प्ररुपण किये हुए धर्मकी शरणमें जाता हूँ।।१०।।

अर्थ - ढाई द्वीप दो समुद्र सम्बन्धी जो पन्द्रह कर्मभूमि क्षेत्रमें रहनेवाले जितने अरिहंतोंको, भगवंतोंको द्वादशांगी आदि के करनेवालेंको, तीर्थंकरोंको, जिनेश्वरोंको, जिनोत्तमकों, केवलीको, सिद्धको, बुद्ध को मोक्ष पाये हुओंको, अंतकृत केवलीको, पार पाये हुओंको, धर्मांचार्यको, चतुर्विध संघको, द्वादशांगीरुप अमृतका पान करानेवालोंको, धर्मके नायकको धर्मप्रधान — श्रेष्ठ हैं वो चारो गतियोंको अन्त करनेके लिये उत्तम चक्रवर्ती समानको, देवाधिदेवको, ज्ञानको, दर्शनको चारित्रको हमेशा मैं करता हूँ, हे भदन्त। मैं सामायिक करता हूँ। मैं जहांतक नियम हो वहांतक सब सावद्ययोगों पच्छखाण करता हूँ।हे भगवान !मैं मन वचन काय से प्रतिक्रमण करता हूँ, आत्म निंदा करता हूँ, गर्हा करता हूँ। जहांतक अरिहंत भगवानके णमोकारका मुखसे स्पष्ट उच्चारण न करुं वहांतक, कायोत्सर्ग करता हूँ वहांतक पाप कर्म तथा दुष्ट कर्म का त्याग करता हूँ।

थोस्ममि हं जिणवरें तित्थयरें केवली अणंत जिणे
णर पवर लोय महिए, विहुयरमले महप्पण ।।

अर्थ - जिनवरको, तीर्थंकरको, केवलीको, अनन्त जिनवर को तथा लोकमें श्रेष्ठ लोगोंसे पूज्य और रजोमलसे सहित ऐसे महात्माको नमस्कार करता हूँ ।।११।।

लोयस्सुज्जोययरे, धम्मं तित्थंकरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिसे, चउविसं चे व केवलिणो ।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ - लोकमें उद्योत करनेवाले, धर्मप्रधान जो तीर्थरुप ऐसे जिन भगवन्तकी मैं वन्दना करता हूँ और कर्मरुप शत्रुओंको हननेवाले अरिहंत और केवलज्ञानी चोबीस तीर्थकरोंका मैं स्तवन करुंगा ।।

उसहमजियं च वंदे संभव मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं, सुपासं जिणं च चंदप्पहं वंदे ।।

अर्थ - ऋषभदेव, अजितस्वामी, सम्भवनाथ, अभिनंदन, सुमतिनाथ, पद्मप्रभु, सुपार्श्वनाथ और चन्द्रप्रभुजीकी मैं वन्दना करता हूँ ।।

सुविहिं च पुप्फयंतं, सीयलसेयं च वासुपुज्जं च।
विमलमणंतं भयवं, धम्मं संतिं च वंदामि ।।

अर्थ - सुविधिनाथ, पुष्पदंत,शीतलनाथ, श्रेयांस, वासुपुज्य, विमलनाथ, अनंतनाथ, धर्मनाथ, शांतिनाथ भगवानकी मैं वन्दना करता हूँ ।।

कुंथुं च जिण वरिदं, अरं च मल्लिं च सुव्वयं चणमिं।
वंदामि रिट्ठणेमिं तहपासं वड्ढमाणं च ।।

अर्थ - कुन्थुनाथ, अरनाथ मल्लिनाथ, मुनिसुव्रत नमि-अरिष्टेनेमि, पार्श्वनाथ और वर्द्धमान स्वामीको मैं नमस्कार करता हूँ ।।

एवं मए अभित्थुया, विहुयरयमला, पहिण जरमरणा
चउविसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ।।

अर्थ - ऐसे वे मुनिराज, रजोमलरहित और जरा मरणसे रहित ऐसे चोबीस तीर्थंकर मुझे प्रसन्न हों ।।

कित्तिय वंदिय महिया, एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा
आरोग्ग णाण लाहं, दिंतु समाहिं च मे बोहिं ।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ - जिनकी महिमा कीर्तिरुपसे पाई गई है ऐसे लोक मे उत्तम सिद्ध भगवन्त मुझे आरोग्य और ज्ञानका लाभ दें और समाधि तथा बोधिलाभ दें।।

चंदेहिं णिम्मलयरा, आइच्चेहिं अहिय पयासंता।
सायर मिव गंभीरा, सिद्ध सिद्धं मम दिसंतु।।11।।

अर्थ - चन्द्र जैसे निर्मल, सबका हित करनेवाले सागर जैसे गम्भीर ऐसे सिद्ध पुरुष मुझे सिद्धि दें।।

श्रीमते वर्धमानाय, नमो नमित-विद्विषे।
यज्ज्ञानाऽन्तर्गतं भूत्वा, त्रैलोक्यं गोष्पदाऽयते ।।12।।

अर्थ - मोहादि भयंकर शत्रुओं का नाश करनेवाले और लोक को जाननेवाले ऐसे श्री वर्धमान स्वामी को मैं नमस्कार करता हूँ।

तवसिध्दे णय- सिध्दे, संजमसिध्दे, चरित्त-सिध्दे य।
णाणम्मि दंसणम्मि य, सिध्दे सिरसा णमंस्सामि ।।13।।

अर्थ - जिनके केवलज्ञान विद्या आलोक सहित तीनों लोकों को दर्पण के सदृश प्रतिभाषित करती है जिनकी आत्मा कर्ममल रहित है ऐसे श्री वर्धमान स्वामी को मैं नमस्कार करता हूँ।

इच्छामि भंते! सिध्द-भत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, सम्मणणाण, सम्म-दंसण-सम्म-चरित्त-जुत्ताणं, अट्ठ-विह-कम्मविप्प-मुक्काणं, अट्ठ-गुण-संपण्णाणं, उड्ढ-लोए-मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तव सिध्दाणं, णय- सिध्दाणं, संजय-सिध्दाणं, चरित्त-सिध्दाणं, अतीदाणागद-वट्टमाण-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कालत्तय-सिध्दाणं, सव्व-सिध्दाणं सया णिच्चकालं अच्चेमि, पूज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइ-गमणं, समाहिमरणं जिण-गुण-सम्पत्ति होउ मज्झं।।

अर्थ - हे भगवान्! मैं सिध्दभक्ति धारण करनेके लिये दिवस सम्बन्धी कृत कर्मोंकी आलोचना करता हूँ। सम्यग्दर्शन सम्यज्ञान, सम्यक्चरित्रमयी, आठ कर्म रहित, आठ गुण सहित लोकके अन्त भागमें विराजमान तप, ज्ञान, संयम, सम्यक्चारित्र, दर्शन और परम ध्यानादि उत्तम गुणोंसे सिध्द अवस्थाको प्राप्त होते हुए भूत, भविष्य और वर्तमानकाल संबंधी समस्त सिध्द भगवानकी मैं अभ्यर्चना, पूजा, गुणोंका चिन्तवन, वंदना,नमस्कार करता हूँ। सिध्द भक्तिसे मेरे दु:खोंका नाश सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रकी प्राप्ति, सुगति गमन समाधिमरण और जिनगुण सम्पत्ति प्राप्त हो।।१४।।

दर्शन प्रतिमा

पंचुम्बर सहियाइं, सत्तवि वसणाइं जो विवज्जेइ।
सम्मत्तविशुध्द मई, सो दंसण सावओ भणिओ।।

अर्थ - पाक्षिक, नैष्ठिक और साधक इस प्रकार श्रावकके तीन भेद है। पाक्षिक श्रावक वह हो सकता है जो सबसे प्रथम श्री जिनेन्द्रदेवके प्रतिपादित सात तत्वोंका यथार्थ श्रध्दान करे क्योंकि धर्मका मूल श्रध्दान है।

बिना इसके धर्मपंथका अनुयायी हो नहीं सकता। इसका कारण एक यह भी हैं कि सुख शांति और प्रेम ये तीनों धर्मके अङ्ग है और ये बिना

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विश्वासके यथार्थ नहीं हो सकते हैं। इसलिए जिन आज्ञाको हृदयसे, धारण करता हुआ कषायोंको घटानेके लिये सदाचारका पालन करे।।१५।।

पाक्षिक श्रावक जिनदर्शन १, जलगालन २, रात्रिभोजन त्याग ३, पांच उदंबर (बडफल-पीपलफल-कठुमर-पाकरफल उदंबर) त्याग ४, मद्यत्याग ५, मधुत्याग ६, मांस त्याग ७, और जीव दया प्रतिपालन ८ ये आठ मूल गुणोंका पालन करता हैं। अभ्यासके लिये पांच अणुव्रत (हिंसा-झूठ-चोरी कुशीलका त्याग और परिग्रहका परिणाम) तीन गुणव्रत चार शिक्षाव्रत आदि व्रतोंका पालन करता हैं।

सप्त व्यसनों (जुआ खेलना, मांस भक्षण, मद्यपान शिकार खेलना, चोरी करना, वेश्यागमन करता और परस्त्री सेवन करना) को उभय लोकमें दु:खदायक समझकर सेवन नहीं करता हैं। अभक्ष्य सेवन भी नहीं करता हैं। बाह्य और अभ्यंतर शुध्दिके लिये पूर्ण प्रयत्नशील होता हैं।

षट् आवश्यक १ देव पूजा २, गुरुपासना ३, स्वाध्याय ४, संयम पालन ५ तप और ६ सुपात्रको दान देना। ये सब कर्तव्य पाक्षिक श्रावक के हैं। इन कर्तव्यके साथ धार्मिक और व्यवहार नीति भी पालन करना चाहिये। सबसे प्रथम श्रावकको २५ दोष रहित सम्यक् दर्शन निर्दोष पालन करना चाहिये।

नैष्ठिक श्रावक उक्त समस्त कर्तव्योंको पूर्ण रुपसे पालन करता है तथा सम्यग्दर्शनको विशुध्दि विशेष रखता हूँ, ग्यारह प्रतिमांये नैष्ठिक तथा साधक श्रावक की होती है। धारण करनेवालोंके भी उक्त कर्तव्य है।।१५।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

व्रत प्रतिमा

पंच य अणुव्वयाइं, गुणव्वयाइं हवंति तह तिण्णि।
सिक्खावयाणि चत्तारि, जाण विदियम्मि ठाणम्मि ।।

अर्थ - पांच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, और चार शिक्षाव्रतोंको जो नियमसे पालन करता है वह व्रत प्रतिमाधारक है।

● - स्थूल हिंसा, झूठ, चोरी कुशीलका त्याग और परिग्रहका परिमाण ये पांच अणुव्रत हैं।

● - जो आंखोंसे दिख सके ऐसे त्रस जीवोंको नहीं मारना तथा बिना प्रयोजन एकेन्द्रिय जीवोंकी हिंसा नहीं करना सो प्रथम अहिंसाणुव्रत है।

● - रागद्वेषसे अनीति वचन नहीं कहना, और जिन वचनोंके कहनेसे किसी जीवकी हिंसा होती हो ऐसा सत्य वचन भी नहीं बोलना सो सत्याणुव्रत है।

● - नगर, ग्राम और चोराहा आदिसें पडा हुआ, भूला हुआ, गिरा हुआ, पराया (अन्यका) द्रव्य नहीं लेना सो अचौर्याणुव्रत है।

● - पर्वके दिवसों मे सर्वथा स्त्री मात्रका त्याग करना परस्त्रीका सेवन नहीं करना, और अनंग क्रीडा नहीं करना सो ब्रह्मचर्याणुव्रत हैं।

● - धन, धान्य रत्न सुवर्ण आदि परिग्रहका परिमाण करना सो परिग्रहपरिमाण नामका अणुव्रत है। इस प्रकार ये पांच अणुव्रत है।

● - पूर्वोत्तरादि चारो दिशामें परिमाण कर उसके बाहर नहीं जाना सो प्रथम गुणव्रत दिग्व्रत है।

● - दिग्व्रतकी अभ्यंतर दिशाओंकी मर्यादा कर बाहर नहीं जाना

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तथा जिस देशमें व्रतके भंग होनेकी संभावना हो ऐसे देशमें नहीं जाना सो द्वितीय देशव्रत नामक गुणव्रत है।

● - अनर्थदण्ड, पापोपदेश, हिंसादान, दुःश्रुति, अपध्यान और प्रमादचर्या भेदसे पांच प्रकार हैं। तथापि इसके अनेक भेद होते हैं। इनका सबका यही अभिप्राय है कि जिन कार्योंसे कुछ प्रयोजन विशेष शुध्द न होता हो और हिंसा तथा क्लेश परिणाम अधिक होते हों ऐसे लोहेके शस्त्र, लाठी आदि हिंसाका व्यापार, झूठी तराजू, खोटे बाट आदिसे व्यापार आदिका त्याग करना तृतीय गुणव्रत है।

● - भोग और उपभोगसे विषयोंका सेवन होता हैं, भोग उसे कहते हैं जो एकबार भोगनेमें आवे। शरीरको श्रृंङ्गार करनेवाली चीजें, पान सुगंधित पदार्थ-तेल इत्र पुष्पादिका परिणाम करना भोगविरति शिक्षाव्रत है।

● - बार-बार भोगनेमें आवे उसे उपभोग कहते है उपभोगरुप स्त्री, वस्त्र, आभरण आदिके सेवन करनेका नियम करना दूसरा शिक्षाव्रत हैं।

● - उत्तम, मध्यम और जघन्य भेदसे पात्र तीन प्रकार हैं। पात्र में चार प्रकारका दान देना तथा चैत्य, चैत्यालय सिध्दक्षेत्र, शास्त्र, स्वाध्यायालय, विद्यालय, औषधालय में दान देना तृतीय शिक्षाव्रत है।

धरिऊण वत्थमेत्तं परिग्गहं छंडिऊण अवसेसं
सगिहे जिणालय वा तिविहाहारस्स वोस्सरणं।।
जं कुणदि गुरुपयासे सम्ममालोइउण तिविहेण ।
सल्लेहणं चउत्थं सुत्ते सिक्खावयं भणियं ।।15।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ - वस्त्रमात्र परिग्रहको रखकर अवशेष समस्त परिग्रहका त्याग कर अपने घरमें अथवा जिनालयमें सल्लेखना धारण करे। व्रतफल सिध्दि समाधिमरणसे ही होती है। इतना ही नहीं किन्तु समाधिमरण आत्म-सिध्दिका अंतिम उपाय है- सुगतिका बीज है। समाधिमरण विधि-प्रतिकार रहित मरणके कारण उपस्थित होने पर साम्यभाव और शांतिसे धैर्यपूर्वक, क्रोधादि विकार रहित शरीरका विसर्जन करना समाधिमरण है। और उसकी सिध्दिके लिये क्रमसे तीन प्रकारके आहारोंका त्यागकर गर्म जल अथवा तक्र (छाछ-मठ्ठाका) सेवन करे, और अनावश्यकता होने पर उसका भी त्याग करे।

अपनी पर्यायमें किये हुए बुरे कर्मोंकी आलोचनापूर्वक प्रतिक्रमण करे, पश्चाताप करे, और सबसे क्रोधादि विकार भावोंकी क्षमा मांगकर शांति से णमोकार मन्त्रका ध्यान धरता हुआ शरीरको छोडे। यह चौथा सल्लेखना नामका शिक्षाव्रत हैं। इस प्रकार दूसरी प्रतिमा धारण करनेवाला श्रावक इन बारह व्रतोंका पालन करता है।।१५।।

सामायिक प्रतिमा

जिणवयाण धम्मेचइय, परमेट्ठि जिणयालयाण णिच्चंपि।
जं वंदणं तिआलं, कीरइ सामाइयं तं खु ।।

सामायिक में कुत्सितध्यान और चिंता को छोड देना चाहिए। जिनदेव, जिनवचन, जिनधर्म जिनालय और पंच परमेष्ठीके गुणोंका चिंतवन ध्यान, वंदना स्तुति आदि त्रिकाल करना सो सामायिक है। समतासे राग द्वेष और उसके उत्पादक कारणों का करना सो सामायिक प्रतिमा है।।१६।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रोषधोपवास प्रतिमा

उत्तम मज्झ जहण्णं, तिविहं पोसहविहाण मुद्दिट्ठं।
सगसत्तीएमासम्मि, चउसु पव्वेसु कायव्वं ।।

अर्थ - प्रोषधोपवास उत्तम, मध्यम और जघन्य भेदसे तीन प्रकार हैं। उत्तम वह है जिसमें धारणा और पारणाके दिवस एकाशन पूर्वक उपवास करना, इसमें समस्त प्रकारके आरम्भका त्याग कर देना चाहिये। निर्भय होकर निशल्यता पूर्वक पंच परमेष्ठीका ध्यान धरना चाहिये।

मध्यम समस्त हिंसक आरंभको छोड़कर उपवास करनेसे होता हैं। जघन्य अथवा एक अन्नको ग्रहणकर स्वाध्यायादिसे शांतिलाभ करता हुआ धर्मसेवन करनेसे होता है। पुर्वके दिन प्रोषधोपवास करना चौथी प्रतिमा है।।१७।।

सचित्तत्याग प्रतिमा

जं वज्जिजदि हरिदं, तय पत्तं पवाल कंदफल वीयं।
अप्पासुगं च सलिलं, सचित्तणिव्वत्तिमं ठाणं ।।

अर्थ - सचित्त वस्तु- हरित अंकुर पत्र, फल, कन्द बीज और अप्रासुक जलादि सेवन नहीं करना पंचम प्रतिमा है।।१८।।

दिवामैथुनत्याग या रात्रिभोजनत्याग प्रतिमा

मण वयण काय कद का, रिदाणुमोदेहिंमेहुणं णवधा।
दिवसम्मि जो विवज्जदि, गुणम्मि जो सावओ छट्ठो।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ - मन, वच, काय और कृत कारित अनुमोदना से दिवस में मैथुन सेवन नहीं करना छट्ठी प्रतिमा है।।१९।।

पुव्वुत्तणव विहाणं पि, मेहुणं सव्वदा विवज्जंता।
इत्थिकहादि णिवित्ती, सत्तमगुण बंभचारी सो ।।

अर्थ - पूर्वोक्त नव प्रकारसे स्त्री मात्रका त्याग तथा स्त्री कथादिका भी त्याग करना सातमी प्रतिमा है।।२०।।

आरम्भत्याग प्रतिमा

जं किं पि गिहारंभं, बहुथोवं वा सया विवज्जेदि।
आरंभणिवितमदी, सो अट्ठम सावओ भणिओ ।।

अर्थ - थोडा बहुत गृह सम्बन्धी आरम्भ छोडना आठवी प्रतिमा है।।२१।।

परिग्रहत्याग प्रतिमा

मोत्तूण वत्थमित्तं, परिग्गहं जो विवज्जदेसेसं।
तत्थवि मुच्छंण करेदि, वियाण सो सावओ णवमो।।

अर्थ - वस्त्र मात्रको रखकर अवशेष परिग्रहका त्याग करना नवमी प्रतिमा है।।२२।।

अनुमतित्याग प्रतिमा

पुट्ठो वाऽपुट्ठो वा, णियगेहिं परेहिं सग्गिह कज्जे।।
अणुमणणं जो ण कुणदि, वियाण सो सावओ दसमो ।।10।।

अर्थ - जो अपने अथवा अन्यके हर कार्य सम्बन्धी आरंभमें अनुमति नहीं होती है। दसवी प्रतिमा का धारक है।।२३।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उद्दिष्टत्याग प्रतिमा

णवकोडीसु विशुध्दं, भिक्खायरणेव भुंजदे भुंजं।
जायणरहियं जोग्गं, एयारस सावओ सो दु ।।11।।

अर्थ - नवकोटिसे विशुध्द, भिक्षाके आचरण पूर्वक दीनता रहित, भोजन करना ग्यारहवीं प्रतिमा का धारक है।।२४।।

एयारसम्मि ठाणे, उक्किट्ठो सावओ हवई दुविहो।
वत्थेय धरो पढमो, कोवीण परिग्गहो विदिओ ।।

अर्थ - उत्कृष्ट श्रावकके क्षुल्लक ऐलक ऐसे दो भेद हैं। प्रथम वस्त्रका रखनेवाला और दूसरा कौपीन मात्र रखनेवाला है।।२५।।

तव वय णियमावासय, लोचं करेदि, पिच्छगिण्हेदि।
अणुवेहा धम्मझाणं, करपत्ते एय-ठाणम्मि ।।

अर्थ - उभय प्रकारके उत्कृष्ट श्रावक तप, व्रत, नियम, संयम, ध्यान, प्रथमकी समस्त प्रतिक्रियायें सदाचार नियमसे पालन करता है। निर्दोष आहार एक समय पाणिपात्रमें लेता है तो कषायोंका विजयी एकादश प्रतिमा धारक है।

एत्थ मे जो कोई देवसिओ (राइओ) अइचारो अणाचारो तस्स भंते! पडिक्कमामि पडिक्कम्मं तस्स मे सम्मत्तमरणं, समाहिमरणं, पंडियमरणं, वीरियमरणं, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ - इस प्रकार उक्त व्रतोंमें मुझसे दिन-रात सम्बंधी अतीचार लगे हों उसका प्रतिक्रमण करता हूँ। इससे यह भी चाहता हूँ कि समाधिमरणआदि उत्तम गुण प्राप्त हो।।२७।।

दंसण वय सामाइय, पोसह सचित्त रायभत्तेय।
बंभारंभ परिग्गह, अणुमणमुद्दिट्ठदेस विरदोय ।।

एयासु जधा कहिद पडिमासु पमादाइ कयाइचार सोहणं छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं। अरहंत सिध्द आइरिय उवज्झाय सव्वसाहुसक्खियं, सम्मत्तपुव्वगं, सुव्वदं दिढव्वदं समारोहियं ते मे भवदु, ते मे भवदु, ते मे भवदु।

अथ देवसिय (राइयं) पडिक्कमणाए, सव्वाइचार विसोहिणिमित्तं, पुव्वाइरियकमेण पडिक्कमण भत्ति कायोत्सर्गं करोमि।।२८।।

(नौ बार णमोकार मंत्र का जाप्य करना)

णमो अरहंताणं णमो सिध्दाणं णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं।।

(३ बार बोले)

णमोजिणाणं! णमोजिणाणं! णमोजिणाणं! णमो णिस्सिहीए! णमो णिस्सिहीए! णमो णिस्सिहीए! णमोत्थुदे! णमोत्थुदे! णमोत्थुदे! अरहंत ! सिध्द ! बुध्द ! णीरय ! णिम्मल! सममण ! सुभमण ! सुसमत्थ ! समजोग ! समभाव !

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सल्लघट्टाणं ! सल्लघत्ताणं ! णिब्भय ! णिराय ! णिद्दोस ! णिम्मोह ! णिम्मम ! णिस्संग ! णिसल्ल ! माणमायमोसमूरण, तवप्पहावण, गुणरयण, सीलसायर, अणंत, अप्पमेय, महदि महावीर वड्ढमाण, बुध्दिरिसिणो चेदि णमोत्थु दे णमोत्थु दे णमोत्थु दे।

मम मंगलं अरहंता य, सिध्दा य, बुध्दा य, जिणा य, केवलिणो, ओहिणाणिणो, मणपज्जयणाणिणो, चउदस-पुव्वगामिणो, सुदसमिदिसमिध्दाय, तवोय, बारह विहो तवस्सी, गुणाय, गुणवंतोय, महरिसी तित्थं तित्थंकराय, पवयणं पवयणी य, णाणं णाणी य, दंसणं दंसणी य, संजमो संजदा य, विणओ विणदा ए, बंभचेरवासो, बंभचारी य, गुत्तीओ, चेव गुत्तिमंतो य, मुत्तिओ चेव मुत्तिमंतो य, समिदीओ, चेव समिदि मंतो य, सुसमय परसमय विदु, खंति खंतिवंतो य, खवगाय, खीणमोहा य खीणवंतो य, बोहिय बुध्दाय, बुध्दिमंतो य, चेइयरुक्खाय चेईयाणि।

उड्ढ-मह-तिरियलोए, सिध्दायदणाणि णमंस्सामि, सिध्दणिसीहियाओ, अट्ठावय पव्वये, सम्मेदे, उज्जंते, चंपाए, पावाए, मज्झिमाए, हत्थिवालियसहाय, जाओ अण्णाओ काओवि णिसीहियाओ जीवलोयम्मि इसिपब्भारतलगयाणं सिध्दाणं बुध्दाणं कम्मचक्कमुक्काणं णीरयाणं णिम्मलाणं गुरु

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आइरिय उवज्झायाणं पव्वतित्थेर कुलयराणं चउवण्णोय समण-संघोय, दससु भरहेरावएसु पंचसु महाविदेहेसु जो लोए संति साहवो संजदा तवसी एदे मम मंगलं पवित्तं एदेहं मंगलं करेमि भावदो विसुध्दो सिरसा अहिवंदिऊण सिध्दे काऊण अंजलि मत्थयम्मि तिविहं तियरण सुध्दो ।।

अर्थ - हे जिनराज! आपके लिये नमस्कार है। स्तुत्यवन्दनीय, मंगलमय अरहन्त भगवान मेरा कल्याण कीजिये।

हे महावीर! आपका स्तवन करता हूँ। आप राग, द्वेष, मोह, ममत्व, परिग्रह शल्य (माया मिथ्या निदान) और कषाय रहित हो।

आपने साम्यभाव धारण करके समस्त कर्मोका नाश किया है। शुभ भावोंको धारण कर निर्भय हो गये हो। आपका तप ही प्रधान योग है। इसलिये आप गुण-रत्न हों, शीलके सागर हों, अप्रमेय हों, महान हो, मुनि महर्षि और ज्ञानीजनोंसे पूज्य, लोक-शिरोमणि सर्वज्ञ हों, कर्ममल रहित सिध्द हो, (भविष्यमें) शुध्द हों, अनंत गुणोके पुंज हों, अभी! मेरा मंगल करो।

केवली, अरहन्त, तीर्थंकर, अवधिज्ञानी, मन:पर्ययज्ञानी, श्रुतकेवलज्ञानी, शास्त्रज्ञानी, पवित्र तप और तपके धारक यतीश्वर गुणी (ऋध्दिधारी मुनीश्वर को गुणी कहते है) गुणवान, महर्षि सिध्दांत, सिध्दांतज्ञानी, ज्ञानी, सम्यग्दृष्टि, संयमी, विनय करने योग्य, ब्रह्मचारी, गुप्तिधारक, समिति पालक, स्वसमयके ज्ञाता, क्षीणमोह ज्ञानी ऋषि, महर्षि और ऋध्दिधारक मुनीश्वर मेरा कल्याण करो।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तीन लोकमें जितनी जिन प्रतिमा, जिन चैत्यालय, सिध्दक्षेत्र और तीर्थक्षेत्र हैं उनको मैं नमस्कार करता हूं। अष्टापद, सम्मेदाचल, गिरनार, चम्पापुर, पावापुर, हस्तिनापुर, आदि तीर्थोंसे और विदेहक्षेत्रसे तथा समस्त कर्मभूमि से जितने जीव कर्ममल रहित सिध्द, बुध्द और निर्मल हो गये हैं। उन चारों प्रकारके संघको मंगल करो, पवित्र करो, शांति करो।।२९।।

(१२ प्रतिमा में लगे दोषों का पश्चाताप)

पडिक्कमामि भंते! दंसण पडिमाए, संकाए, कंखाए, विदिगिंच्छाए, परपासंडपसंसणाए, पसंथुए, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा में दुक्कडं।।

अर्थ - हे भगवान्! कृतकर्मोंके पश्चातापपूर्वक प्रतिक्रमण करता हूं। दर्शन प्रतिमाके पालन करनेमें जिनमार्गमें शङ्का की हो, शुभाचरण पालनकर संसार-सुखकी आकांक्षा (निदान) की हो, धर्मात्माओंके मलिन शरीरको देखकर ग्लानि की हो, मिथ्या मार्ग और उसके सेवनेवालोंकी प्रशंसा की हो, इत्यादि जो मैंने दिवस सम्बन्धी अतीचार मन वचन कायसे किये हों, अन्यके करनेमें अनुमति प्रदान की हो तो तत्संबंधी समस्त कार्योंकी आलोचना करता हूं, पश्चाताप करता हूं और वे कर्म मिथ्या हों।।।३०।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पडिक्कमामि भंते! वद पडिमाए पढमे थूलयडे हिंसाविरदिवदे: वहेण वा, बंधेण वा, छेएण वा, अइभारारोहणेण वा, अण्णपाणणिरोहणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।

अर्थ - हे भगवान्! मैं अपने कृत कर्मोंकी आलोचना पूर्वक पश्चाताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता है। दूसरी व्रत प्रतिमाके अन्तर्गत प्रथम अहिंसाणुव्रतके पालन करनेमें जीवोंको बांधा हों, मारा हों, अंगोपांग छेदे हों, शक्तिसे अधिक बोझ लादा हो और अन्न पानका विरोध किया हो, इत्यादि अनेक अतीचार अनाचार दिन-रात सम्बन्धी मुझसे मन, वचन काय और कृत, कारित अनुमोदनासे लगे हों वे निरर्थक हों, ऐसी मेरी भावना हैं।।३१।।

पडिक्कमामि भंते! वद पडिमाए विदिये थूलयडे असच्चविरदिवदे मिच्छोपदेसेण वा, रहोब्भक्खाणेण वा, कूडलेह करणेण वा, णायापहारेण वा, सायारमंतभेएण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ - हे भगवान्! मैं अपने कृत कर्मोंकी आलोचना पूर्वक पश्चाताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूँ। दूसरी व्रत प्रतिमाके अन्तर्गत सत्यव्रत मिथ्या उपदेश देनेसे, एकांत में कही हुई बातको प्रकट कर देनेसे, झूठा लेख लिखनेसे, धरोहर हरण करनेसे, किसीकी इंगित चेष्टासे अभिप्राय समझकर भेद प्रकट कर देने से अनेक प्रकार अतीचार, अनाचार, मन, वच, काय और कृत, कारित अनुमोदना से हुये हों वे सब मिथ्या हो।।३२।।

पडिक्कमामि भंते! वद पडिमाए तिदिये थूलयडे थेणविरदिवदे थेणपओगेण वा थेणहरियादाणेण वा, विरुध्दरज्जा इक्कमणेण वा, हीणाहियमाणुम्माणेण वा, पडिरुवय ववहारेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।

अर्थ- हे भगवान्! मैं अपने कृत कर्मोंकी आलोचना पूर्वक पश्चाताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूँ। दूसरी प्रतिमाके अन्तर्गत स्थूल अचौर्याणुव्रतके पालन करनेमें दिन-रात संम्बधी मन, वचन, काय, और कृत कारित,अनुमोदना चोरीका प्रयोग बतलाया हो, तोलनेमे बांट कमती बढ़ती रखे हों, और अधिक कीमती वस्तुमें अल्प कीमती मिलाकर बदल दी हों, इस प्रकार अनेक दोष किये हों वे सब निरर्थक हों।।३३।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पडिक्कमामि भंते! वद पडिमाए चउत्थे थूलयडे अबंभविरदिवदे परविवाहकरणेण वा इत्तरियागमणेण वा, परिग्गहिदा परिग्गहिदागमणेण वा, अणंगकीडणेण वा, कामतिव्वभिणिवेसेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।

अर्थ- हे भगवन्! मैं अपने व्रतोंमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चाताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूँ। दूसरी व्रत प्रतिमाके अंतर्गत स्थूल ब्रह्मचर्याणु व्रतके पालन करनेमें दिवस संबंधी मन, वचन काय और कृत , कारित अनुमोदनासे अन्यके पुत्रियोंका विवाह किया हो, व्यभिचारिणी स्त्री के घरके साथ व्यवहार आना-जाना आदि रखा हो, वेश्या, कुमारिका और विधवा इत्यादिक परिग्रह और अपरिग्रहीत स्त्रियों के साथ कामवासना से व्यवहार किया हों, काम सेवनके अंग सिवाय अन्य अंगसे कामचेष्टा की हो, कामके तीव्र विकारसे बिभत्स विचारा हो, इत्यादि अनेक प्रकारके दोष दिन-रात सम्बन्धी मुझमें लगे हों, दूसरेसे कराया हों अन्यके करनें में हर्ष माना हो सब मिथ्या हो।।३४।।

पडिक्कमामि भंते! वद पडिमाए पंचमे थूलयडे परिग्गहपरिमाणवदे:- खेत्तवत्थूणं परिमाणाइक्कमणेण वा, धणधण्णाणं, हरिण्णसुवण्णाणं परिमाणाइक्कमणेण वा, परिमाणइक्कमणेण वा, दासीदासाणं परिमाणाइक्कमणेण

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वा, कुप्पभांड परिमाणाइक्कमणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।

अर्थ - हे भगवन् ! मैं अपने व्रतोंमे लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चाताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। दूसरी प्रतिमाके अन्तर्गत स्थूल परिग्रह त्यागव्रतमें जमीन, घर गाय, बैल, प्रभृति, धन और गेहूं आदि धान्य, सुवर्ण, चांदी , दासी, दास वस्त्र और भांड़ इत्यादि समस्त परिग्रहके परिमाणका मैंने मन, वचन, काय और कृत कारित अनुमोदनासे उल्लंघन किया हो, अन्यसे कराया हो, अन्यके करनेमें अनुमति दी हो तो, उस सम्बन्धी मेरे दोष मिथ्या हों।।३५।।

पडिक्कमामि भंते! वद पडिमाए पंचमे गुणव्वदेः- उड्ढवइक्कमणेण वा, अहोवइक्कमणेण वा, तिरियवइक्कमणेण वा, खेत्तवध्दिएण वा, अंतराधाणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।

अर्थ- हे भगवान! मैं अपने व्रतोंमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चाताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूँ। मैंने व्रतके प्रतिमाके अंतर्गतगुणव्रत का प्रथम भेद दिग्व्रत नामक व्रतके पालन करनेंमें ऊर्ध्व दिशाका अतिक्रमण किया हो, नीचेकी दिशाका अतिक्रमण किया हो, तिर्यग्‌दिशाका अतिक्रमण किया हो, क्षेत्रकी मर्यादा बढ़ाई हो अथवा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मर्यादाका विस्मरण किया हो, इत्यादि अनेक प्रकारके दोष दिन-रात सम्बन्धी मैंने किये हो, अन्यसे कराये हों और अन्यके करनेमें अनुमति दी हो तो वे सब मिथ्या हो!।३६।।

पडिक्कमामि भंते! वद पडिमाएविदिए गुणव्वदेः- अणयणेण वा, विणिजोगेण वा, सद्दाणुवाएण वा, रुवाणुवाएण वा, पुग्गलखेवेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।

अर्थ- हे भगवन् ! मैं अपने व्रतमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चाताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूँ। दूसरी प्रतिमाके अन्तर्गत गुणव्रतका दूसरा भेद देशव्रतके पालन करनेमें मर्यादा किये हुये क्षेत्रके बाहरसे वस्तु मंगाई हो, मर्यादाके बाहर वस्तु भेजी हो, कंकर पत्थर फेककर अन्य मनुष्यसे मर्यादाके बाहरका कार्य किया हो, शब्द आदिकी समस्या दिखलाकर कार्य किया हो, अपना रुप दिखलाकर मर्यादा बाह्य कार्य सिद्ध किया हो, इत्यादि अनेक दोष मन, वचन, कायसे दिन-रात मैंने किये हों, अन्यसे कराये हों अथवा अन्यके करनेंमें अनुमति प्रदान की हो तो वे सब मिथ्या हो।।३७।।

पडिक्कमामि भंते! वद पडिमाएतिदिए गुणव्वदेः- कंदप्पेण वा, कुकुवेएण वा, मोक्खरिएण वा, असमक्खियाहिकरणेण वा, भोगोपभोगाणत्थकेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ- हे भगवन् !मैं अपने व्रतमें लगे हुये दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चाताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूँ। दूसरी व्रत प्रतिमाके अन्तर्गत गुणव्रतका तीसरा भेद अनर्थ दंड विरति व्रतमें रागके उदयसे स्मित हास्यसे मजाक की हो, कुत्सित भाषण, शरीरको खोटी चेष्टा, विना प्रयोजन बकवास किया हों, व्यर्थके कार्य किये हों, (प्रयोजन बिना आवश्यकता हिंसाजनक व्यापार किया हो,) भोगोपभोगकी सामग्री अपेक्षासे बहुत ही अधिक निष्काम संग्रह की हों, इत्यादि अनेक प्रकारके दोष मन वचन कायसे दिन-रात मैंने किये हों, अन्यसे कराये हों, अथवा किसीके करने पर हर्ष प्रदर्शित किया हो तो वे सब दोष मिथ्या हों।।३८।।

पडिक्कमामि भंते! वद पडिमाए पढमे सिक्खावदेः- फांसिंदिय भोगपरिमाणाइक्कमणेण वा, रसणिंदिय भोगपरिमाणाइक्कमणेण वा, घाणिंदिय भोगपरिमाणाइक्कमणेण वा, चक्खिंदिय भोगपरिमाणाइक्क-मणेण वा, सवणिंदिय भोगपरिमाणाइक्कमणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।

अर्थ- हे भगवन् ! मैं अपने व्रतोंमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चाताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूँ। व्रत प्रतिमाके अंतर्गत प्रथम शिक्षाव्रत भोग परिमाण व्रतमें स्पर्श इन्द्रिय, रसना इन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय, श्रोत्रेन्द्रिय इस प्रकार पांच इंद्रियोंके विषय सम्बन्धी भोग पदार्थोंके परिमाणका अतिक्रमण मन वचन काय द्वारा दिन-रात स्वयं किया हों, अन्यसे कराया हो, किसीके करनेमें भला माना हो, इत्यादि दोष मैंने किये हों तो वे सब मिथ्या हों।।३९।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पडिक्कमामि भंते! वद पडिमाए विदियसिक्खावदे:- फांसिंदिय परिभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा, रसणिंदिय परिभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा, घाणिंदिय परिभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा, चक्खिंदिय परिभोगपरिमाणाइक्कमाणाइक्क-मणेण वा, सवणिंदिय परिभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।

अर्थ- हे भगवन् ! मैं अपने व्रतोंमे लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक प्रतिक्रमण करता हूँ। व्रत प्रतिमाके अंतर्गत शिक्षाव्रतका तीसरा भेद उपभोग परिमाण व्रतमें स्पर्शेन्द्रिये, रसेन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय उपभोग परिमाण, इस प्रकार पांचों इंद्रियोंके उपभोग सम्बन्धो पदार्थोका अतिक्रम मन वचन कायसे किया हों, कराया हो, करनेको भला माना हो इत्यादि अनेक दोष दिन-रात मुझसे बने हों तो वे सब मिथ्या हों।।।४०।।

पडिक्कमामि भंते! वद पडिमाए तिदिए सिक्खावदे:- सचित्ताक्खेवेण वा, सचित्तपिहाणेण वा, परउवएसेण वा, कालाइक्कमणेण वा, मच्छरिएण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।

अर्थ- हे भगवन् !मैं अपने लगे हुये दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चाताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूँ व्रत प्रतिमाके अन्तर्गत

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शिक्षाव्रतका तीसरा भेद अतिथिसंविभाग नामक व्रतमें सचित्त वस्तुमें प्रासुक अचित्त पदार्थको रखा हो, सचित्त वस्तुसे ढका हो, अन्य किसीके प्रतिपादित करनेसे दिया अथवा अन्यका द्रव्य अपना कहकर दिया हो, दान देनेमें समयका परिच्छेद किया हो, दान देनेमें अन्य भव्य आत्माओंके साथ द्वेष किया हो इत्यादि अनेक प्रकारके दोष, मन वचन, कायसे दिवसमें मैंने स्वयं किये हो, अन्यसे कराये हों, किसीको करनेमें मैंने स्वयं किये हो, किसीको करनेमें सम्मति प्रदान की हो तो वे सब दोष मिथ्याहो ।।४१ ।।

पडिक्कमामि भंते! वद पडिमाए चउत्थे सिक्खावदे:- जीविदासंसणेण वा, मरणासंसणेण वा, मित्ताणुराएण वा, सुहाणुबंधेण वा, णिदाणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।

अर्थ- हे भगवन् ! मैं अपने व्रतमें लगे हुये दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चाताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूँ। व्रत प्रतिमाके अन्तर्गत शिक्षा व्रतका चौथा भेद समाधिमरण व्रत पालन करनेमें जीवित रहनेकी आशा रखना, मरणका भय करना,हाय!मैं मर जाऊंगा क्या? ऐसे परिणामोंसे संक्लेशित होना अथवा शीघ्रतासे मरण होनेकी इच्छा रखना मित्रजनोंसे प्रेम करना, पूर्वमें हुए भोगोंका स्मरण करना और व्रतादिक पालन कर सांसारिक सुखकी इच्छा करना इत्यादि अनेक दोष दिन-रात मैंने मन, वचन, कायसे किये हों, अन्यसे कराये हों, किसीके करनें मे अनुमति प्रदान की हो तो, वे सब दोष निरर्थक हों।।४२ ।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पडिक्कमामि भंते! सामाइय पडिमाए :- मणदुप्पणिधाणेण वा, वचदुप्पणिधाणेण वा, कायदुप्पणिधाणेण वा, कायदुप्पणिधाणेण वा, अणादरेण वा, सदि अणुव्वट्ठावणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।

अर्थ- हे भगवन् ! मैं अपने व्रतोंमे लगे हुए दोषोकी आलोचना पूर्वक पश्चाताप करता हुआ प्रतिक्रमण करनेमें मनकी स्थिरता न रखी, वचनकी स्थिरता न रखी, शरीरकी स्थिरता नहीं रखी, सामायिक करनेमें अनादर प्रकट किया अथवा सामायिकके पाठका विस्मरण किया इत्यादि अनेक प्रकारके दोष दिवस में मैने मन वचन कायसे किये हो, अन्यसे कराये हो, किसी अन्यके करनेकी अनुमति प्रदान की हो तो वे सब दोष मिथ्या हों।।४३।।

पडिक्कमामि भंते! पोसह पडिमाए:-

अप्पडिवेक्खियापमज्जियोसग्गेण वा, अप्पडिवेक्खियापमज्जिदाणेण वा, अप्पडिवेक्खिया पज्जियासंथारो वक्कमणेण वा, आवस्सयाणदरेण वा, सदिअणुवट्ठावणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ- हे भगवन्! मैं अपने व्रतमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चाताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूँ। चौथी प्रोषधोपवास नामक प्रतिमाके पालन करनेमें दृष्टिसे जीव जंतुओंको न देखकर और प्रमादसे जीवजंतुओंका शोधन किये बिना मल मूत्रका क्षेपण किया हो अथवा पूजोपकरण आदि वस्तुओंका बिन देखे बिना शोधे ऐसे ही जीव जुंतुवाली जमीनमें रखी हो। बिना देखे और बिना शोधे उपकरण पुस्तक आदि सयंमोपयोगी वस्तुओंका ग्रहण की हों, बिना शोधे बिस्तर आदिबिछाये हो षट् आवश्यक पालन करनेमें अनादर किया हो अथवा सामायिक, पूजन, स्तवन आदिका पाठ विस्मरण किया हो इत्यादि अनेक दोष दिन-रात मैंने मन वचन कायसे स्वयं किये हों, अन्यसे करायें हों व अन्य किसीके करनेमें अनुमति प्रदान की हो तो वे सब दोष मिथ्या हो।।४४।।

पडिक्कमामि भंते! सचित्तविरदिपडिमाए :- पुढविकाइआ जीवा असंखेज्जासखेज्जा, आउकाइया जीवा असंखेज्जासखेज्जा वा, तेउकाइया जीवा असंखेज्जासखेज्जा, वाउकाइया जीवा असंखेज्जासखेज्जा, वणप्फदिकाइआ जीवा अणंताणंता, हरिया बीया अंकुरा छिण्णा भिण्णा एदेसिं उद्दावणं परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।

अर्थ- हे भगवन्! मैं अपने व्रतोंमे लगे हुये दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चाताप करता हूँ। प्रतिक्रमण करनेका इच्छुक हूं। पांचवीं सचित्त त्याग प्रतिमाके पालन करनेमें जलकायके, तेजकायके जीव, वायुकाय

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

के, पृथ्वीकायके और वनस्पतिकायके अनंतानंत जीव, हरितकायके जीव, हरित अंकुर, बीज कंदमूल आदिजीव, और साधारण वनस्पती जीवोंका छेदन किया हो, भेदन किया हो, प्राणोका घात किया हो, पांव आदि से कुचल दिये हों, त्रास दिया हों, पीडा करी हो और उनकी विराधना की हो इत्यादी अनेक दोष मैंने मन वचन कायसे स्वयं किये हों, अन्यसे कराये हो, किसी अन्यके करनेमें सहमत हुआ हो तो, वे सब मिथ्या हों ।।४५ ।।

पडिक्कमामि भंते! राइभत्तपडिमाए:- णवविहबंभचरियस्स दिवा जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।

अर्थ- हे भगवन्! मै अपने व्रतोंमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चाताप करता हुआ प्रतिक्रमण करनेकी इच्छा करता हूँ। षष्ठी दिवा मैथुन त्याग नामक प्रतिमाके पालन करनेमें नव प्रकार-स्त्रियोंके विषयकी अभिलाषा, लिंग विकार, घृत दुग्धादि पुष्टरस त्याग, स्त्री-पशु-नपुं-सक-विट, और सप्त विषयोंके लोलुप मनुष्योंके आश्रित वस्तिका त्याग, स्त्रियोंके मनाहर अंग-निरीक्षण त्याग, स्त्रियोकी बुरी वासना आदर सत्कारका त्याग, संगीत नृत्य वादित्र आदिका श्रवण किया हो इत्यादी अनेक दोष दिन-रातमें मैंने मन वचन कायसे स्वयं किये हों, अन्यसे कराये हों, किसी अन्यके करनेमें भला माना हो तो, वे सब दोष मिथ्या हों ।।४६ ।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पडिक्कमामि भंते! बंभपडिमाए इत्थिकहायत्तणेण वा, इत्थिमणोहरांग णिरिक्खिणेण वा, पुव्वरयाणुस्सरणेण वा, काकोवणरसासेवणेण वा, शरीरमंडणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।

अर्थ- हे भगवन्! मैं अपने व्रतमें लगे हुये दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चाताप करता हूँ। प्रतिक्रमण करता हूँ। सातवी ब्रम्हचर्य प्रतिमाके पालन करनेमें स्त्रियोंके मनोहर कामोत्पादक कथा की हो, काम दृष्टिसे स्त्रियोंके गृह्य मनोहर अंगोका निरिक्षण किया हो, कामोत्पादक पुष्ट रसोंका सेवन किया हों इत्यादी अनेक प्रकारके दोष मैंने दिवसमें मन, वचन कायसे किये हों, अन्यसे कराये हों, किसी अन्यके करनेमें अनुमति प्रदान की हो तो वे सब दोष मिथ्या हों।।४७।।

पडिक्कमामि भंते! आरंभविरदिपडिमाए कसायवसंगएण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।

अर्थ- हे भगवन्! मैं अपने व्रतोंमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चाताप करके प्रतिक्रमण करता हूँ। आठवीं आरम्भ त्याग प्रतिमाके पालन करनेंमें क्रोध, मान, माया, लोभ औंर मोह

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आदिकषायोंके वश पापकर्मोका आरम्भ दिनरात में मैंने मन, वचन, कायसे किया हो, अन्यसे कराया हो, अन्य किसीके करनेमे अनुमति प्रदान की हो तो, वे मेरे सब दोष मिथ्या हों।।४८।।

पडिक्कमामि भंते! परिग्गहविरदिपडिमाए :- वत्थमेत्त परिग्गहादो अवरम्मि परिग्गहे मुच्छापरिणामे जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।

अर्थ- हे भगवन्! मैं अपने व्रतोंमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चाताप करके प्रतिक्रमण करता हूँ। नवमी परिग्रह त्याग प्रतिमाके पालन करनेमें वस्त्र मात्र परिग्रह सिवाय अन्य परिग्रहमें मूर्छा की हो तो उस सम्बन्धी दिन-रात में मन, वचन, काय और कृत, कारित, अनुमोदनासे किये हुए सब दोष मिथ्या चाहता हूँ।।४९।।

पडिक्कमामि भंते! अणुमणविरदिपडिमाए जं किं पि अणुमणणं पुट्ठापुट्ठेण कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।

अर्थ- हे भगवान्! मैं अपने व्रतोंमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चाताप करके प्रतिक्रमण करता हूँ। दशवीं अनुमतिविरति प्रतिमाके पालन करनेमें अन्यके पूछने पर भी जो कुछ अनुमति दी हो, तत्

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सम्बंधी मन, वचन, काय और कृत, कारित अनुमोदनासे दिन-रात में किये हुये समस्त दोष मिथ्या हो।।५०।।

पडिक्कमामि भंते! उद्दिट्ठविरदिपडिमाए उद्दिट्ठदोसबहुल आहारादियं आहारयं वा आहाराविर्य वा आहारिज्जंतं वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।

अर्थ- हे भगवान्! मैं अपने व्रतोंमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चाताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूँ। ग्यारवीं उद्दिष्टत्याग प्रतिमाके पालन करनेमें उद्दिष्ट दोषोंके दूषित आहार स्वयं सेवन किया हो अन्यको उद्दिष्ट दोष सहित आहार कराया हों, उद्दिष्ट दोष दूषित आहारके करनेमें सम्मति प्रदान की हों, तत्संम्बन्धी जो दोष मन, वचन, कायसे मुझसे हुये हों, वे सब मिथ्या हों।।५१।।

पंचमखण्ड

निर्गन्थ पद की वांछा

इच्छामि भंते! इमं णिग्गंथं पवयणं अणुत्तरं केवलियं, पडिपुण्णं, णेगाइयं, सामाइयं, संसुद्धं, सल्लघट्टाणं,सल्लाघत्ताणं सिद्धिमग्गं, सेढिमग्गं, खंतिमग्गं, मुत्तिमग्गं, पमुत्तिमग्गं, मोक्खमग्गं, पमोक्खमग्गं, णिज्जाणमग्गं, पिव्वाणमग्गं, सव्वदु:खपरिहाणिमग्गं, सुचरियपरिणिव्वाणमग्गं, अवितहं,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अविसंति-पवयणं, उत्तमं तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि, तं फासेमि, इदोत्तरं अण्णं णत्थिं, ण भूदं, ण भविस्सदि, णाणेण वा दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, इदो जीवा सिज्झंति, बुज्झंति, मुच्चंति, परि-णिव्वाणयंति, सव्व-दुक्खाण-मंतं करेंति, पडि-वियाणंति, समणोमि, संजदोमि, उवरदोमि, उवसंतोमि, उवहि-णियडि-माण-माया-मोसमूरण-मिच्छाणाण-मिच्छा-दंसण-मिच्छाचरित्तं च पडिविरदोमि, सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तं च रोचेमि, जं जिणवरेहिं पण्णत्तो, इत्थ मे जो कोई (राइओ) देवसिओ अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा में दुक्कडं।52

अर्थ- हे भगवान्! मैं निर्ग्रंथ पदकी इच्छा करता हूँ। जब मक मेरा संसारसे सम्बन्ध है तब तक भव भवमें यह त्रिजगत् पूज्य और मंगल लोकोत्तम शरणभूत निर्ग्रन्थ पद बारबार मिले। समस्त परिग्रह, अनुत्तर-(मोक्षमार्गका साक्षात् चिन्ह निर्ग्रन्थ लिंग सिवाय अन्य किसी भी लिंगसे मोक्षकी प्राप्ति नहीं होती है इसलिये निर्ग्रन्थ पद लोकोत्तर है)।

केवल-ज्ञानका उत्पादक, रत्नत्रयका बीज, सर्व सावद्य रहित परम उदासिनताका कारणभूत, आलोचना-प्रायश्चितनिरतिचारता प्रतिक्रमण आदि गुणोंसे परम विशुद्ध, माया मिथ्या निदान इस प्रकार शल्यत्रय रहित, आत्मसिद्धिका प्रधान मार्ग, उपशम क्षयोपशमादि श्रेणियोंका साक्षात् मार्ग, परिग्रह, क्रोध मान, माया, लोभ, काम और

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

व्यामोहादि समस्त विकार रहित होनेसे सर्वोत्तम निर्ग्रन्थ परमात्मा प्राप्तिका प्रत्यक्ष मार्ग, त्यागका मार्ग, निर्वाणका मार्ग, अबाधित मार्ग, निर्भयताका मार्ग, सर्व सुखोंका मार्ग और सर्वोत्कृष्ट मार्ग ऐसा निर्ग्रन्थ पद है।

मैं उक्त सर्वोकृष्ट निर्ग्रन्थ पदको विशुद्ध भावोंसे श्रद्धान करता हूँ, और संशयादि समस्त विकार रहित शुद्ध निश्चयसे चाहता हूं, विशुद्ध भावोंसे निश्चयरुप मानता हूँ, विश्वास करता हूं,सहृदयसे स्वीकार करता हूँ।

इस निर्ग्रन्थ पद सिवाय और दूसरा कोई भी उत्तम पद नहीं है। सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र और सम्यक् आगम से यह निर्ग्रन्थपद सर्वोत्कृष्ट है। इसके धारण करने से ही जीव मोक्षमार्गमें प्राप्त होंगे, सिद्धपदको प्राप्त होंगे। समस्त कर्मरहित सर्वथा मुक्त होंगे, अर्थात् फिर कभी संसारके बंधनमें प्राप्त नहीं होंगे। इसी निर्ग्रन्थ पदसे निर्वाण पदको प्राप्त होंगे, सर्व दु:खों का नाश करेंगे। समस्त जीवादि तत्वोंके ज्ञाता होंगे।

इस निर्ग्रन्थ पद सिवाय और दूसरा कोई भी उत्तम पद नहीं हैं। सम्यदर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र और सम्यक आगमसे यह निर्ग्रन्थपद सर्वोत्कृष्ट है। इसके धारण करनेसे ही जीव मोक्षमार्गमें प्राप्त होंगे, सिद्धपदको प्राप्त होंगे। समस्त कर्मरहित सर्वथा मुक्त होंगे, अर्थात् फिर कभी संसारके बंधनको प्राप्त नहीं होंगे। इसी निर्ग्रन्थ पदसे निर्वाण पदको प्राप्त होंगे, सर्व दुखोंका नाश करेंगें। समस्त जीवादि तत्वोंके ज्ञाता होंगे।

इसलिये मैं इस महान् परम पूज्य निर्ग्रन्थ पदको धारण करता हूँ। और उसकी प्राप्तिके लिये संयमकी आराधना करता हूँ। विषय कषायोंसे

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उपशांत होता हूं, विरक्त होता हूं। परिग्रह क्रोध, मान, माया, लोभ, मात्सर्य, द्वेष, राग, काम,भय, प्रपंच और समस्त व्यामोहको छोड़ता हूँ,हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रहका त्याग करता हूँ। मिथ्याज्ञान, मिथ्यादर्शन, मिथ्याचारित्रसे सर्वथा विरक्त हो गया हूँ। अब मैं सदाके लिये इनका परित्याग करता हूं और सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान ,सम्यकचारित्रकी श्रद्धा करता हूँ। जो जिनेंद्र भगवानने कहा है कि वह सत्य है, प्रमाणित है, निश्चय है, अबाधित है। उसका मैं विश्वास करता हूँ। श्रद्धान करता हूँ। इस विषयमें मुझसे जो कुछ अतीचार हुए हों तों, सब मिथ्या हों।।५ २।।

इच्छामि भंते! पडिकमणाइचारमालोचेउं जो मए देवसिओ (राइओ) अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभागो, काइओ, वाइओ, माणसिओ, दुच्चरिओ, दुच्चारिओ, दुब्भासिओ, दुप्परिणामिओ, णाणे, दंसणे, चरित्ते, सुत्ते, सामाइए, एयारसण्हं, पडिमाणं विराहणाए, अट्ठ-विहस्स कम्मस्स-णिग्घादणाए, अण्णहा उस्ससिदेण वा, णिस्सासिदेण वा, उम्मिस्सिदेण वा, णिम्मिस्सिदेण वा, खासिदेण वा, छिंकिदेण वा, जंभाइदेण वा, सुहुमेहिं-अंग-चलाचलेहिं, दिट्ठिचलाचलेहिं, एदेहिं, सव्वेहिं, अ-समाहिं-पत्तेहिं, आयरेंहि, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, पज्जुवासं करेमि, ताव कालं पाव कम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दंसण वय सामाइय, पोसह सचित्त राइभत्तेय।
बंभारंभ परिग्गह, अणुमणमुद्दिट्ठदेस विरदेदे।।

एयासु जधा कहिद पडिमासु पमादाइ कयाइचार सोहणट्ठं छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं। अरहंत सिध्द आयरिय उवज्झाय सव्वसाहुसक्खियं, सम्मत्तपुव्वगं, सुव्वदं दिढव्वदं, समारोहियं ते मे भवदु, ते मे भवदु, ते मे भवदु।

अथ देवसियो (राइय) पडिक्कमणाए सव्वाइचार विसोहिणिमित्तं, पुव्वाइरियकमेण निष्ठितकरण वीरभक्ति कायोत्सर्गं करेमि।

(इति विज्ञाप्य-णमो अरहंताणं इत्यादि दण्डकं पठित्वा कायोत्सर्गं कुर्यात। थोस्सामीत्यादि स्वयं पढ़ें।)

अर्थ- हे भगवान! मैं वीर प्रभुकी भक्ति करनेका इच्छुक हूं और इसके लिये इस विनाशिक शरीरसे ममत्वभाव छोडता हूँ। दिवसमें(रात्रिमें इत्यादि) आवश्यक क्रियाओंके करते हुए मैंने आलस किया हो, व्रतादिकोंका भंग किया हो, उनमें अतिचार लगाये हों, शिथिलता धारण की हो, मनमें ग्लानि उत्पन्न की हो, प्रगटरूप दंभवृत्तिसे व्रतपालन किये हों, लज्जाके लिये एकदम अपनेको छुपाकर आचरण किये हों। मन, वचन और शरीरकी दुष्टतासे व्रतोंका पालन किया हो, बीभत्स उच्चारणका कार्य किया हो। राग, द्वेष, अज्ञान और प्रमादसे विनय रहित उद्दण्डतासे व्रतोंका पालन किया हो, अपशब्द कहकर महत्वता बतलाई हो, कुत्सित परिणामेंसे

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कार्य किया हो,बूरे स्वप्नमें दोष उत्पादन किया हो, सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र और जिनागमकी विराधना की हो, प्रतिमाकी विराधना की हो, इत्यादि अनेक दोष मुझसे बने हो, वे सब मिथ्या हो।

आठ कर्मोका नाश करनेवाली क्रियाओंके प्रयत्न करनेंमें श्वासोच्छवाससे, नेत्रोंकी टंकारसे, खांसनेसे, छींकनेसे, जंभाई लेनेसे , सूक्ष्म अंगोंके हिलनेसे, आंगोपांगके फेंकनेस, दृष्टिदोष से इत्यादि समस्त क्रियाओं से सूत्रपाठ आदि क्रियाओं का विस्मरण किया हों, अविनय की हो, प्रमाद और अज्ञानसे अन्यथा प्ररुपण किया हो तो मैं इस प्रतिक्रमणके समय वीर भगवानकी भक्तिरुप कायोत्सर्ग धारण करता हूं, और तब तक पाप कर्मोको सर्वथा छोडकर शरीरसे भी ममत्व त्याग करता हूँ।जैसा प्रतिक्रमण किया हो वैसी णमोकार मंत्रके जाप देना चाहिये अर्थात् दिन-रात सम्बन्धी प्रतिक्रमणकी ३ ६ बार णमोकार मंत्रके जाप देना उसी प्रकार उक्त लिखित नियमसे १ ० ८ बार णमोकार मंत्रके जाप करें ।।५ ३ ।।

शार्दूलविक्रीडित छन्द

य:सर्वाणि चराचराणि विधिवद्, द्रव्याणि तेषां गुणान्,
पर्यायानपि भूत-भावि-भवित:, सर्वान् सदा सर्वदा।
जानीते युगपत् प्रतिक्षण-मत:, सर्वज्ञइत्युच्यते,
सर्वज्ञाय जिनेश्वराय महते, वीराय तस्मै नम:।।1।।

अर्थ - जो समस्त चराचर पदार्थोको तथा समस्त द्रव्य और उनकी कालत्रयवर्ती समस्त पदार्थोको एक-साथ प्रतिक्षण सदैव जानते है उसको सर्वज्ञ कहते हैं। वीर भगवान सर्वज्ञ वीतराग हैं और महान पूज्य जिनेश्वर हैं इसलिए वीरप्रभुको नमस्कार हैं।।५४।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वीरःसर्वसुराऽसुरेन्द्र-महितो, वीरं बुधाः संश्रिताः,
वीरेणाभिहतः स्व-कर्म-निचयो, वीराय भक्त्या नमः।
वीरात् तीर्थ-मिदं प्रवृत्त-मतुलं, वीरस्य घोरं तपो,
वीरे श्री-द्युति-कान्ति-कीर्ति-धृतयो, हे वीरं! भद्रं-त्वयि।।2।।

अर्थ - हे वीर प्रभो! आपकी समस्त इन्द्र पूजा करते हैं। विज्ञ गणधरादि आपकी सेवा करते हैं। और आपने समस्त कर्मोको नष्ट कर दिया है इसलिये हे वीर! आपको नमस्कार है। धर्मतीर्थ आपसे इस कलिकालमें चल रहा हैं, आप घोर तपको धारण करनेवाले परमयोगी हो। आपमें श्री, कांति, कीर्ति, आदि सर्व गुणोंका वास है अतएव आप कल्याण करने वाले हों।।५५।।

ये वीर-पादौ प्रणमन्ति नित्यं,
ध्यान-स्थिताः संयम-योग-युक्ताः।
ते वीत-शोका हि भवन्ति लोके,
संसार-दुर्गं विषमं तरन्ति ।।3।।

अर्थ - जो मनुष्य संयमको धारण कर और ध्यानमें लीन होकर वीर प्रभुको नमस्कार करता है वह समस्त शोकको दूर कर संसार-समुद्र पार हो जाता है।।56।।

मालिनी छन्द

व्रत-समुदय-मूलःसंयम-स्कन्ध-बन्धोः,
यम नियम-पयोभि-र्वर्धितःशील-शाखः।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

समिति-कलिक-भारो गुप्ति-गुप्त-प्रवालो
गुण-कुसुम सुगन्धिःसत्तपश्चित्र-पत्रः ।।4।।
शिव-सुख-फलदायी यो दया-छाययौधः,
शुभजन-पथिकानां खेदनोदे समर्थः।
दुरित-रविज-तापं प्रापयन्नन्तभावं,
स भव-विभव-हान्यै नोऽस्तुचारित्र-वृक्षः ।।5।।

अर्थ - व्रत, संयम, नियम, यश, शील, समिति, गुप्ति, तप, महाव्रत और दश धर्म चारित्रका रूप हैं। चारित्र मोक्षको देनेवाला दया का बीज है, समस्त पाप और संसारका नाश करनेवाला है।५७-५८।।

चारित्रं सर्व-जिनैश्चरितं, प्रोक्तं च सर्व-शिष्येभ्यः।
प्रणमामि पञ्च-भेदं, पञ्चम-चारित्र-लाभाय ।।6।।

अर्थ - सदाचार जिनेन्द्र भगवान ने स्वयं पालन किया है, और समस्त जीवोंके उपकारके लिये सबको बतलाया है। उत्तम चारित्रकी प्प्तिके लिये नमस्कार करता हूँ।।५९।।

शार्दूलविक्रीडित छन्द

धर्मः सर्व-सुखाकरो हितकरो, धर्मं बुधाश्चिन्वते,
धर्मेणैव समाप्यते शिव-सुखं, धर्माय तस्मै नमः।,
धर्मान्नास्त्यपरः सुहृद् भव-भूतां, धर्मस्य मूलं दया,
धर्मे चित्तमहं दधे प्रतिदिनं, हे धर्म मां पालय।।7।।

अर्थ - धर्म का मूल दया है, धर्मको विद्वान, गणधरादिक, मुनिश्वर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

धारण करते हैं, धर्मसे सर्व सुखोंकी प्राप्ति और कल्याण होता है। धर्म सेवन करनेसे मोक्षकी प्राप्ति होती है। धर्म ही जगतका बंधु है इसलिये धर्म-सेवन करनेमें अपना चित्त लगाता हूँ। हे धर्म ! मेरी रक्षा कर। तुम्हे मेरा नमस्कार है।।६०।।

अनष्टप छन्द

धम्मो मंगल-मुक्किट्ठं, अहिंसा संयमो तवो।
देवा वि तस्स पणमंति, जस्स धम्मे सया मणो।।8।।

अर्थ - धर्म समस्त मंगलोंमें से प्रधान मंगल है। अहिंसा, संयम और तप ये धर्म के रूप हैं। जो मनुष्य धर्म को पवित्र ह्रदय से धारण करता है उसको देवता भी नमस्कार करते हैं। ।६१ ।।

इच्छामि भंते! वीरभत्ति काउसग्गं करेमि तत्थ देसासिओ, असणासिआ ठाणासिआ कालासिआ मुद्दासिआ, काउसग्गासिआ पणमासिआ आवत्तासिआ पडिक्कमणाए तत्थसु आवासएसु पडिक्कमणाए तत्थसु आवासएसु परिहीणदा जो मए अच्चासणा, मणसा, वचसा, काएण कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।9।।

दंसण-वय-सामाइय, पोसह-सचित्त-राइभत्ते य।
बंभाऽरंभ-परिग्गह, अणुमणमुद्दिट्ठ-देसविरदेदे ।।9।।
एयासु जधा कहिदु पडिमासु पमादाइ कयाइचार सोहणट्ठं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं। अरहंत सिध्द आयरिय उवज्झाय सव्वसाहुसक्खियं, सम्मत्तपुव्वगं, सुव्वदं दिढव्वदं समारोहियं ते मे भवदु, ते मे भवदु, ते मे भवदु।

अथ देवसियो (राइयो) पडिक्कमणाए सव्वाइचार विसोहिणिमित्तं, पुव्वाइरियकमेण चउवीस तित्थयर भक्ति कायोत्सर्गं करेमि।

(इति विज्ञाप्य-णमो अरहंताणं इत्यादि दण्डकं पठित्वा कायोत्सर्गं कुर्यात्। थोस्मामीत्यादि स्वतं पठेत्।)

(नौ बार णमोकार मंत्र के जाप्य करें।)

अर्थ - हे भगवान्! मैं अन्तमें अब प्रतिक्रमणमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना करता हूँ। द्रव्य-क्षेत्र-काल और भावोंकी अनुकूल योग्यता नहीं मिलनेसे, देश आसन, स्थान, काल, मुद्रा, कायोत्सर्ग, श्वासोच्छवास, नमस्कारदि विधि और स्तुति आदि क्रियामें शीघ्रताके लिये, छह आवश्यक करनेमें कुछ भी हीनता प्राप्त हुई हो, अथवा प्रमाद और अज्ञानसे जिन दोषोंकी (अथवा मन, वचन, काय और कृत कारित अनुमोदना द्वारा) प्राप्ति हुई हो वे सब मिथ्या हों।

इस प्रकार दोषोंकी शांतिके लिये चौवीस तीर्थंकर भक्ति व कायोत्सर्ग धारण करे।।६२।।

चउवीसं तित्थयरे, उसहाइ-वीर-पच्छिमे वन्दे।।
सव्वेसगण-गण-हरे, सिध्दे सिरसा णमंसामि।।1।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ - प्रथम ऋषभदेवको आदि लेकर वीरप्रभु पर्यन्त चौबीस तीर्थंकर और सिद्ध परमेष्ठीको नमस्कार करता हूँ ।।६३।।

स्त्रग्धरा छन्दा

ये लोकऽष्ट-सहस्त्र-लक्षण-धरा: ज्ञेयार्णवान्तर्गता:
ये सम्यग्-भव-जाल-हेतु-मथना-श्चन्द्रार्क-तेजोऽधिका:।
ये साध्विन्द्र-सुराप्सरो-गण-शतै-र्गीत-प्रणूतार्चितास्-
तान् देवान् वृषभादि-वीर-चरमान्, भक्त्या नमस्याम्यहम्।।2।।

अर्थ - समस्त ज्ञेय पदार्थोंके ज्ञाता, एक हजार आठ शुभ लक्षणोंसे विराजमान, संसारके बन्धनको नाश करनेवाले, करोडों सूर्य और चन्द्रमासे भी अधिक तेजस्वी, मुनिश्वर नरेन्द्र और देवेन्द्रसे पूज्य ऋषभादि चौबीस तीर्थंकरोंको मैं नमस्कार करता हूँ।।६४।।

नाभेयं देवपूज्यं जिनवर-मजितं सर्व-लोक-प्रदीपम्,
सर्वज्ञं सम्भवाख्यं मुनि-गण-वृषभं-नन्दनं देव-देवम्।
कर्मारिघ्नं सुबुध्दि वर-कमल-निभं पद्म-पुष्पाभि-गन्धम्
क्षान्तं दान्तं सुपाश्र्व सकल शशि-निभं चंन्द्रनामान-मीडे ।।3।।

विख्यातं पुष्पदन्तं भव-भय-मथनं शीतलं लोक-नाथम्
श्रेयांसं शील-कोशं प्रवर-नर-गुरुं वासुपूज्यं सुपूज्यम्।
मुक्तं दान्तेन्द्रियाश्वं विमल-मृषि-पतिं सिंहसैन्यं मुनीन्द्रम्,
धर्मं सद्धर्म-केतुं शम-दम-निलयं स्तौमि शान्तिं शरण्यम्

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कुन्थुं सिध्दालयस्थं श्रमण-पतिमरं त्यक्त-भोगेषु चक्रम्,
मल्लिं विख्यात-गोत्रं खचर-गण-नुतं सुव्रतं सौख्य-राशिम्।
देवेन्द्रार्च्यं नमीशं हरि-कुल-तिलकं नेमिचन्द्रं भवान्तम्
पार्श्वं नागेन्द्र-वन्द्यं शरणमहमितो वर्धमानं च भक्त्या ।।5।।

अञ्जलिका

इच्छामि भंते! चउवीस-तित्थयर-भक्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, पंच-महाकल्लाण-संपण्णाणं, अट्ठमहा-पाडिहेर-सहियाणं, चउतीसाऽतिसयविसेस-संजुत्ताणं, बत्तीस-देविंद-मणिमय-मउड-मत्थय-महिदाणं, बलदेव-वासुदेव-चक्कहर-रिसिमुणि-जइ-अणगारोवगूढाणं, थुइ-सय-सहस्स-णिलयाणं, उसहाइवीर-पच्छिम-मंगल-महा-पुरिसाणं, सया णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइगमणं समाहि मरणं, जिण-गुण-सम्पत्ति होदु मज्झं।

दंसण वय सामाइय, पोसह सचित्त राइभत्तेय।
बंभारंभ परिग्गह, अणुमणमुद्दिट्ठदेस विरदेदे।।

एयासु जधा कहिद पडिमासु पमादाइकदादिचार साहणट्टं छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं! अरहंत सिध्द आयरिय उवज्झाय सव्वसाहु सक्खियं, सुव्वदं दिढव्वदं समारोहियं ते मे भवदु, ते मे भवदु, मे भवदु।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अथ देवसिया (राइयो) पडिक्कमणाएसव्वादि चार विसोहिणिमित्त, पुव्वाइरिय कमेण आलोयण श्री सिद्धभत्ति पडिक्कमणभत्ति, णिट्ठिदकरण वीरभत्ति, चउवीस-तित्थयर भत्ति, कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादिदोष परिहरणार्थं सकल दोष निराकरणार्थं सर्वमलातिचार विशद्धयर्थं आत्मपवित्रीकरणार्थं समाधिभक्ति कायोत्सर्गं करोमि।

अर्थ - हे भगवन ! मैं समस्त दोषोंको दूर करनेके लिये चौबीस तीर्थंकरोंकी भक्ति रूप कायोत्सर्ग धारण करता हुआ अपने कृत कर्मोंकी आलोचना करता हूँ। महान पंच कल्याणकोंसे सुशोभित, अष्ट महाप्रातिहार्य सहित, चौतीस अतिशय सहित, बत्तीस प्रकारके देवेन्द्रोंके मस्तकमें लगी हुई मणियोंसे पूज्य, बलभद्र-वासुदेव-चक्रवर्ती-रुद्र-ऋषि-मुनिश्वर-यती अनगार आदि महान पुरुषोंके शिरोवंद्य देवेन्द्रों से सतत् वंदनीय ऋषभदेवसे प्रारम्भकर वीर भगवान पर्यंत चौबीस तीर्थंकर महामंगलके करनेवाले हैं, पुण्य पुरुष हैं, उनकी मैं त्रिकाल वन्दना करता हूँ, स्तवन करता हूं, पूजा करता हूँ, नमस्कार करता हूं, चौबीस भगवानकी भक्तिसे दु:खोंका नाश हो, कर्मोंका नाश हो, रत्नत्रयकी प्राप्ति हो, शुभ गति हो, समाधिमरण हो और भी जिनेन्द्रदेवके गुणोंकी प्राप्ति हो।

दर्शनादि प्रतिमा में सर्व दोषोंकी विशुद्धिके लिए पूर्व आचार्योकी परिपाटीके अनुकूल अपने समस्त कृत कर्मोंकी आलोचना पूर्वक श्री सिद्ध प्रतिक्रमणभक्ति-वीरभक्ति और चौबीस तीर्थंकर भक्ति करनेपर विशेष दोषोंकी शुद्धिके लिये समाधि भक्ति का कायोत्सर्ग धारण करता हूँ। अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और सर्वसाधुको साक्षीपूर्वक सम्यग्दर्शन सहित उत्तमोत्तम व्रतोंका समारोह मेरे हृदयमंदिरमें हो।।६५।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(९ वार णमोकार मन्त्र २७ श्वासमें)

अथेष्ट-प्रार्थना

प्रथम करणं चरणं द्रव्यं नमः-

शास्त्राभ्यासो, जिन-पति-नुतिः, संगतिः सर्वदार्यैः,
सद्वृत्तानां, गुण-गण-कथा, दोष-वादे च मौनम्।
सर्वस्यापि, प्रिय-हित-वचो, भावना चात्म-तत्त्वे,
सम्पद्यन्तां, मम भव-भवे, यावदेतेऽपवर्गः।।1।।

अर्थ - जैनागम अथवा जिन सिध्दांतका अभ्यास, श्री जिनेन्द्र देव भगवान की भक्तिपूर्वक वन्दना, सदाचारधारी जैन यति-ब्रह्मचारी, ऐलक और विद्वान महात्माओंका संग, श्री जिनेन्द्रदेव प्रभृति पुण्य पुरुषोंकी कथा का श्रवण, दूसरोंकी निंदाका त्याग, दूसरोंके तिरस्कारमें मौन, समस्त जीवमात्रमें प्रेम, हितमित प्रिय वचन और आत्मभावना इतनी वस्तुओंका समागम जबतक मोक्षकी प्राप्ति न हो तब नित्य भव भवमें रहो।।६६।।

आर्या

तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पदद्वये लीनम्।
तिष्ठतु जिनेन्द्र! तावद्, यावन्निर्वाण-सम्प्राप्तिः ।।2।।

अर्थ - जिनेन्द्र देव! आपके पवित्र चरणकमल जबतक मुझे मोक्षकी प्राप्ति न हो तब तक मेरे हृदय-मंदिरमें विराजमान रहो और मेरा हृदय आपके चरणकमलोमें लीन रहे।।६७।।

अक्खर-पयत्थ-हीणं, मत्ता-हीणं च जं मए भणियं
तं खमउ णाणदेवय! मज्झमि दुक्खक्खयं कुणए।।3।।

अर्थ - हे जिनशासन (जिनागम) देव! मैंने अक्षर मात्रा रहित जो कुछ अशुध्द उच्चारण किया हो तो क्षमा करो और मेरे दु:खोंका नाश करो।।६८।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इच्छामि भंते! समाहिभत्ति-काउसग्गो कओ तस्सालोचेउं, रणयत्तय-सरुव-परमप्प-ज्झाण-लक्खण-समाहि-भत्तिए सया णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइ-गमणं समाहि मरणं जिण-गुण-सम्पत्ति होदु मज्झं।

अर्थ - हे भगवन् ! मैंने समाधि भक्ति का कायोत्सर्ग किया, तत्संबंधी आलोचना करने की मैं इच्छा करता हूँ। मैं रत्नत्रय स्वरुप परमात्मा का ध्यान है लक्षण जिसका ऐसी समाधि भक्ति की सदा अर्चना, पूजा करता हूँ, वन्दना करता हूँ, नमस्कार करता हूँ, मेरे दु:खों का क्षय हो, कर्मों का क्षय हो, रत्नत्रय का लाभ हो, सुगति में गमन हो, सम्यक् प्रकार आधि-व्याधि उपाधिरहित समाधिपूर्वक मरण हो मुझे जिनेन्द्र देव के गुणरुप सम्पत्ति की प्राप्ती हो।

इच्छामि भंते इरियावहियस्य आलोचेउं पुव्वत्तर दक्खिण पच्छिम चउदिसु विदिसासु विहरमाणेण जुगंतर दिट्ठिणा दट्ठुवा डवडवचरियाए पमाददोसेण पाणमूद जावसत्ताणं उवघातो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिंदो तस्स मिच्छमि दुक्कडं।

(९ बार णमोकार मन्त्रकी जाप और आवर्त्त चारो दिशामें एवं प्रणुत्ति)

।। इति श्रावक प्रतिक्रमण ।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिच्छामि दुक्कडम्

प्रणमुं श्री अरहन्तने भजुं सरस्वति भावे।
जीव अनन्तामें बहु हण्या, कहेंता पार न आवे।
ते मुज मिच्छामि दुक्कडम्, अरिहन्तनी साख।।१।।
के में जीव विरधिया, चोर्यासी लाख।
सार संभाल नहीं करो, कीधा छे बहु घात।।ते मुज.।।२।।
इतर नित्य निगोदना, सात सातज लाख।
सात लाख पृथ्वी तणा, सात अपज काय।।ते मुज.।।३।।
दश लाख वनस्पति, प्रत्यक्ष साधारण।
सात लाख तेज कायना, सात वायुज जाण।।ते मुज.।।४।।
बे ती चौ इंद्रि जीवना, बबे लाख विख्यात।
देव, पशु बलि नर्कना चार चार उद्यात।
देव, पशु बलि नर्कना चार चार उद्यात।।ते मुज.।।५।।
चौद लाख मनुष गतिए लक्ष चौर्याशी गणीया।
कृत कारित अनुमोदना, मनवचकायथीहणीया।ते मुज.।।६।।
एणी पेरे पर भवे में कर्या कर्या पाप अनंत।
त्रिविध त्रिविध करहुँ भम्यो,दुर्गती दातार।।ते मुज.।।७।।
हिंसा करी मैं जीवनी, बोल्यो झूंठा बोल।
दोष अदत्ता दानसुं, मैथुन हणमाद।।ते मुज.।।८।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

परिग्रह मेलव्यो कारमों, कीधों क्रोध विशेष।
मान माया लोभ मैं कर्या, बली रागने द्वेष।।ते मुज.।।९।।
चाडी करी में चोतरे, वेर झेर वधार्या।
कुगुरु देव कुधर्मने, करी प्रतोतने पालया।।ते मुज.।।१०।।
क्रोधकरीजीवदुखव्या, कीधां कूडां कलंक।
निंदा करी मैं पारकी, रात दिवस वसंत।।ते मुज.।।११।।
खाटकीना भव में कर्या, जीवना बंध कीधा।
वाघरीने भव चरकली, मारी कई अगणीत।।ते मुज.।।१२।।
माछीने भवे माछलां, झाली जल थकी काढ्यां।
प्रचंड करी भवे पारधी मृग मारीने पाड्या।। ते मुज।।१३।।
काजी मुल्लांने भवे, पढ़ी मन्त्र कठोर।
जीव अनन्त जे में कर्या पाप लाग्यां अघोर।।ते मुज.।।१४।।
कोतवालनो भव में कर्यो, कर्या आकरादंड।
बंदीवान मरावीया, पड्या कोरडा अङ्ग।।ते मुज.।।१५।।
कुंभारनो भव मैं कर्यो, मार्या भट्ठीने तापे।
तेली भवे तल पीलीया, पेट भरीयु में पापे।।ते मुज.।।१६।।
परमाधामीने भवे, दीधां नारकी दुःख।
छेदन भेजन वेदना लेस दीधुं न सुख।।ते मुज.।।१७।।
खेडु? भवे हल खेडीया, फोडया पृथ्वीना पेट।
आदु सुरण धणां कर्या, खाधां खुब चपेट।।ते मुज.।।१८।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मालीने भवे रोपियां नाना विधि वृक्ष।
मूल पात्र फल फूलना, पाप लाग्यां ए लक्ष।।ते मुज.।।१९।।
वरझारानो भव में कर्यो, भर्यो अधिक भार।
पोथी पुंठें कीडा पडया, नहि दया लगार।।ते मुज.।।२०।।
छिपाने भवे छेतर्या, कीधा रङ्गना पास।
अग्नि जल कीधां घणां, जीव पकव्या छे खास।।ते मुज.।।२१।।
सुरपणे रण झुंजता मार्या माणस वृन्द।
मदिरा मांस मधु भख्यां, खाधा मूलने कंद।।ते मुज.।।२२।।
खाण खोदावी मे अति घणी, तेना पाणीउलेच्यां।
आरंभ कीधा अति घणा,नहीं पापज पेख्यां।।ते मुज.।।२३।।
अघोर कर्म कर्या बली, वनमां दव दीधो।
जीव अनंताने भरखीने,नहिं कर्मथी बीधो ।।ते मुज.।।२४।।
भाडभुंजानो भव में कर्यो, मार्या भट्ठीमांजीव।
जुवार चाणा बहु सेकीया, पडता अति बूंद।।ते मुज.।।२५।।
बिल्ली भवे उंदर हण्या गरोलीए अन्तारी।
मनुष्य भवे मूढता थकी, में जू लीख मारी।।ते मुज.।।२६।।
सुवावड दूषण घणां ओणी गर्भ गलाव्या।
जीव अणि विंध्यां घणां, भांग्याशीयल व्रत।।ते मुज.।।२७।।
लुहारनो भव में कर्यो, घडयां शस्त्र अनेक।
कोस कुहाडाने पावडा, मार्या मूकी विवेक।।ते मुज.।।२८।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सुतारनो भव में कर्यो, लीला वृक्ष वढाव्यां।
आवल बावल बोरडी, झाझां मूल कटाव्यां।।ते मुज.।।२९।।
हाथीना भव में कर्या, जीव पूंछे पछाड्या।
पंखी माला तोड़िया, सूढ़े कंईनं झाडया।।ते मुज.।।३०।।
कडीयान भव में कर्या, कुआ वाव खोदाव्या।
टांका में बंधावीया,जीव अनंत पकाव्या।।ते मुज.।।३१।।
धोबीना भव में कर्या, जलना जीव मार्या।
धूलवाते कईक ढांकीया, दान देता वार्या।।ते मुज.।।३२।।
गुज्जरना भव में कर्या, लीला भारा वढाव्या।
पाडा बैल ने ऊंटना, नाक छेदी वींधाव्या।।ते मुज.।।३३।।
वणिकना भव में कर्या, कुंडां पापज कीधां।
ओछुं आपी अदकुं लीधुं तेना दोषज लीधा।।ते मुज.।।३४।।
विकथा चोरी करी बली, सेव्या पंच प्रमाद।
इस्ट वियोग पडाविया, रुदन विखवाद।।ते मुज.।।३५।।
रांधण पीषण गारण, एवा आरम्भ अनेक।
रांधण वालण इंधणा, पाप लाग्या विशेष।।ते मुज.।।३६।।
साधुने श्रावक तणा, व्रत लईने भांग्या।
मूल अने उत्तरतणा, मुज दोषज लाग्या।।ते मुज.।।३७।।
वींछु सिंहने चीतरा, गीध स्यालने समडी।
ए हिंसकतणे भवे हिंसा कीधी में अदकी।।ते मुज.।।३८।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एणो पेरे परभवे में कर्या बांध्या कर्म अनन्त।
त्रिविध त्रिविध करी ओचरुं, करु जन्म पवित्र।।ते मुज.।।३९।।
राग भसाडी जो भणो, गाय ढाल सहित।
'नरेन्द्रकीर्ति' कहे तेहनां, छुटे पाप त्वरित।।ते मुज.।।४०।।

।। इति मिच्छामि दुक्कडम् समाप्तं ।।

आलोचना पाठ

दोहा -वंदों पांचों परम गुरु, चौबीसों जिनराज।
करुं शुद्ध आलोचना सिद्ध करनके काज।।१।।

सखी छन्द

सुनिये जिन अरज हमारी, हम दोष किये अति भारी।
तिनकी अब निवृत्ति काज़, तुम शरन लही जिनराज।।२।।
इक बे ते चउ इन्द्री वा, मन रहित सहित जे जीवा।
तिनकी कहीं करुणा धारी, निरदई है घात विचारी।।३।।
समरंभ समारंभ आरंभ, मन वच तन कीने प्रारंभ।
कृत कारित मोदन करिकैं, क्रोधादि चतुष्टय धरिकैं।।४।।
शत आठ जु इमि भेदन तैं, अघ कीने परि छेदन तै।
तिनकी कहुँ को लों कहानी, तुम जानत केवलज्ञानी।।५।।
विपरीत एकांत विनयके, संशय, अज्ञान, कुनयके।
वश होय घोर अघ कीने, वच तैं नहिं जाय कहिने।।६।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कुगुरुनकी सेवा कीनी, केवल अदया करि भीनी।
या विधि मिथ्यात भ्रमायो, चहुँ गति मधि दोष उपायो।।७।।
हिंसा पुनि झूठ जु चोरी, पर-वनिता सों दृग जोरी।
आरम्भ परिग्रह भीनो, पन पाप जु या विधि कीनो।।८।।
सपरस रसना घ्राननको, चखु कान विषय सेवनको।
बहु करम किये मन माने, कछु न्याय अन्याय न जाने।।९।।
फल पंच उदंबर खाये, मधु मांस मद्य चित्त चाहे।
नहिं अष्ट मूल गुणधारी, सेये कुविषन दुखकारी।।१०।।
दुइबीस अभय जिन गाये, सो भी निश दिन भुज्जाये।
कछु भेदाभेद न पायो, ज्यों त्यों करि उदर भरायो।।११।।
अनंतानुबंधी सो जानो, प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो।
संज्वलन चौकड़ी गुनिये, सब भेद जु षोडश मुनिये।।१२।।
परिहास अरति रहि शोग, भय ग्लानि तिवेद संयोग।
पन बीस जु भेद भये इम, इनके वश पाप किये हम।।१३।।
निद्रा वश शयन कराया, सुपने मधि दोष लगाया।
फिरजागि विषयवन धायो, नानाविधविष-फलखायो।।१४।।
आहार निहार विहारा, इनमे नहि जतन विचारा।
बिन देखे धरा उठाई बिन शोधा भोजन खाया।।१५।।
तब ही परमाद सतायो बहु विधि विकलप उपजायो।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कछु सुधि बुधि नाहिं रही है, मिथ्या मति छाय गई है।।१६।।
मरजादा तुम ढिंग लीनी, ताहू में दोष जु कीनी।
भिन भिन अब कैसें कहिये, तुम ज्ञान विषैंय सब पइये।।१७।।
हा हा! मैं दुठ अपराधी, त्रस जीवन राशि विराधी।
थावरकी जतन न कीनी, उरमें करुना नहिं लीनी।।१८।।
पृथिव बहु खोद कराई महलादिक जागां चिनाई।
पुनि बिन गाल्यो जल ढोल्यो, पंखातै पवन विलोल्यो।।१९।।
हा हा ! मैं अदयाचारी, बहु हरित काय जु विदारी।
ता मधि जीवनके खंदा, हम खाये धरि आनंदा।२०।।
हा हा परमाद बसाई, बिन देखे अगनि जलाई।
ता मधि जे जीव जे आये, ते हू परलोक सिधाये।।२१।।
बीध्यो अन राति पिसायो, ईधन बिन सोध्यो जलाये।
झाडू ले जागां बुहारी, चिंटी आदिक जीव बिदारी।।२२।।
जल छानी जिवानी कीनी, सो हू पुनि डारि जु दीनी।
नहि जल थानक पहुँचाई, किरिया बिन पाप उपाई।।२३।।
जल मल मोरिन गिरवायो, कृमिकुल बहु घातक रायो।
नदियन बिच चीर धुवाये, कोसनके जीव मराये।।२४।।
अन्नादिक शोध कराई, ता मैं जु जीव निसराई।
तिनका नहिं जतन कराया, गरियालैं धूप डराया।।२५।।
पुनि द्रव्य कमावन काजे, बहु आरम्भ हिंसा साजे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

किये तिसनावश अघ भारी, करुणा नहिं रंच विचारी।।२६।।
इत्यादिक पाप अनन्ता, हम कीने श्री भगवन्ता।
संतति चिरकाल उपाई, वानी तैं कहिये न जाई,।।२७।।
ताको जु उदय अब आयो, नाना विध मोहि सतायो।
फल भुंजत जिय दुख पावै, वचतैं कैसे करि गावैं।।२८।।
तुम जानत केवल ज्ञानी, दुख दूर करो शिवथानी।
हम तो तुम शरण लही है, जिन तारण विरद सही है।।२९।।
इक गांव पती जो होवै, सो भी दुखिया दुख खोवै।
तुम तीन भुवनके स्वामी, दुख मेटहु अंतरजामी।।३०।।
द्रोपदीको चीर बढ़ायो, सीता प्रति कमल रचायो।
अंजनसे किये अकामी, दुख मेटो अंतरजामी।।३१।।
मेरे अवगुन न चितारो, प्रभु आपनो विरद निहारो।
सब दोष रहित करि स्वामी, दुख मेटहूँ अंतरजामी।।३२।।
इंद्रादिक पद नहिं चाहूँ, विषयनिमें नाहि लुभाऊँ।
रागादिक दोष हरीजें, परमातम जिन पद दीजैं।।३३।।
<u>दोहा</u> - दोष रहित जिन देवजी, निज पद दिज्यो मोय।
सब जीवनके सुख बढैं, आनन्द मंगल होय।।३४।।
अनुभव माणिक पारखी, ''जौहरि"आप जिनन्द।
येही वर मोहि दीजिये, चरण शरण आनंद।।३५।।

।। इति आलोचना पाठ समाप्तं ।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्री अमितगतिआचार्यविरचित-

सामायिक पाठ

सत्त्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं क्लिष्टेषु जीवेषुकृपापरत्वम्।
माध्यस्थभावं विपरीतवृतौ सदा ममात्मा विदधातु देव।।१।।

हे प्रभु !मेरीं यह भी अभिलाषा है कि जो जीव इस जगतमें अपने शरीरके अथवा मनके दु:खसे दु:खी हैं, जिनके रोग, शोक , क्षुधा, तृषा आदि बाधाऐं है उन जीवोंकी तरफ मेरे अंतरंगमें दया भाव उत्पन्न हो, अर्थात् उनको देखकर मेरा चित्त कांप जावे और यह विचार मजबूत हो जावे कि मुझे जिस तरहसे हो अपनी शक्ति के अनुसार इस दु:खी जीव के दु:खको दूर करना चाहिये। तथा हे सर्वज्ञदेव! मैं यह भी इच्छा करता हूँ कि जिन जीवोंका धर्मसे विपरीत स्वभाव है, अर्थात् जो मिथ्यात्वी वा अधर्मी हैं अथवा जो मेरी अविनय करते व मुझसे द्वेष रखते हैं, उनकी तरफ मैं माध्यस्थभाव करुं, अर्थात् मैं न तो उनसे राग करुं और न द्वेष । क्योंकि उनसे द्वेष करके अपने परिणाम खराब कर बेमतलब पाप बांधना मेरे जैसे समझदार के लिए उचित नहीं है।

शरीरत: कर्तु मनन्तशक्तिं, विभिन्नमात्मानमपास्तदोषम्।
जिनेन्द्रकोषादिवखड्गयष्टिं तवप्रसादेन ममास्तुशक्ति:।।२।।

अर्थ- हे जिनेन्द्रदेव! आपकी कृपासे मेरी आत्मामें ऐसा बल प्रगट हो कि, मैं अपनी आत्माके साथ सम्बन्ध रखनेवाले कार्माण, तेजस, और इस स्थूल औदारिक शरीर को उसी तरह अलग कर दूं जैसे कि म्यानसे

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तलवार अलग की जाती है। क्योंकि मेरी आत्मा निश्चयअनंत शक्तिकी धारी और संपूर्ण दोषोंसे रहित निर्दोष वीतराग सर्वज्ञ है। यद्यपि इन सूक्ष्म और स्थूल शरीरमें मेरी आत्मा फैली हुई है, तथापि उनसे बिलकुल उसी तरह अलग रहती है जैसे पानी पर पड़ा हुआ तेल पानीसे अलग रहता है।

दु:खे सुखे वैरिणि बंधुवर्गे, योगे वियोगे भवने वने वा।
निराकृताशेषममत्वबुद्धः समं मनो मेऽस्तु सदापि नाथ।।३।।

अर्थ- हे नाथ! सर्व ममता बुद्धिको दूर करके मेरा मन सदा ही दु:ख वा सुख अवस्थामें, वैरियों वा बन्धुओंके समूहमें, योग वा वियोगमें घर वा वनमें राग और द्वेषको छोड़कर समरुप होवे।

मुनीश! लीनाविव कीलिताविव स्थरौ निशाताविव बिंबिताबिंब।
पादौ त्वदीयौ मम तिष्ठतां सदा, तमोधुनानौ हृदि दीपिकाविव।।४।।

अर्थ- हे मुनियोंके स्वामी! अज्ञान अन्धकारको दूर करनेवाले आपके दोनों ही चरणकमल दीपक के समान सदा ही मेरे ह्रदयमें इस तरह बसे रहें कि मानों ये मेरे ह्रदयमें लीन हो गये, कीलित हो गये, स्थिर हो गये, बैठ गये तथा तसवीरके समान बिम्बित हो गये हो।

एकेन्द्रियाद्या यदि देव! देहिन:,प्रमादत: संचरता इतस्तत:।
क्षता विभिन्ना मिलिता निपीडिता, तदस्तु मिथ्यादुरनुष्ठितंतदा।।५।।

अर्थ- हे जिनेन्द्रदेव! इधर उधर प्रमादपूर्वक चलते हुए मेरे से यदि एकेन्द्रिय आदि का प्राणी नाश किये गये हों, टुकड़े किये गये हों, कई इकमें

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिला दिये गये हों, दु:खी किये गये हों, तो वह सब मेरा खोटा आचरण मिथ्या होवे।

विमुक्तिमार्गप्रतिकूलवर्तिना, मया कषायाक्षवशेन दुर्धिया।
चारित्रशुद्धेर्यदकारि लोपनं, तदस्तु मिथ्या मम दुष्कृतं प्रभो।।६।।

अर्थ- हे प्रभो! मैं दुर्बुद्धि हूँ, मोक्षमार्गसे विरुद्ध चलने वाला हूँ, मैंने चार कषायों और पांच इन्द्रियोंके वश होकर जो कुछ अपने चारित्रको, निर्मलताका लोप किया हो, वह सब मेरा दुष्कृत मिथ्या होवे।

विनिन्दनालोचनगर्हणेरहं, मनोवच: कायकषायनिर्मितम्।
निहन्मि पापं भवदु:खकारणं, भिषग्विषं मन्त्रगुणैरिवाखिलम्।।७।।

अर्थ-मन,वचन, काय और कषायोंके द्वारा संसारके दुखोंका कारण जो कुछ भी पाप मैंने किया हो, उस सबको मैं अपनी निन्दा, आलोचना और गर्हा करके इस तरह नाश करता हूँ कि जिस तरह वैद्य मन्त्र के शक्ति से समस्त विषको दूर कर देता है।

अतिक्रमं यद्विमतेर्व्यतिक्रमं, जिनातिचारं सुचरित्रकर्मण:।
व्यधामनाचारमपि प्रमादत:,प्रतिक्रमं तस्य करोमि शुद्धये।।८।।

अर्थ- हे जिनदेव! मैंने विकारबुद्धि से अपने उत्कृष्ट चारित्रमें जो प्रमादके कारण अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतिचार और अनाचार किये हैं उनकी शुद्धिके लिये प्रतिक्रमण करता हूँ अर्थात् पश्चाताप करता हूँ।

क्षतिं मन: शुद्धिविधेरतिक्रमं,व्यतिक्रमं शीलव्रतेर्विलंघनम्।
प्रभोऽतिचारं विष येषुवर्तनं,वदन्त्यनाचारमिहातिसक्तताम्।।९।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ- हे प्रभो! आचार्य कहते हैं कि मनकी शुद्धिमें क्षति होना, मनमें विकारभाव उत्पन्न होना अतिक्रम है। शीलव्रतोंका अर्थात् व्रत मई प्रतिज्ञाके उल्लंघन करनेका भाव होना व्यतिक्रम है। विषयोंमें प्रवृत्ति करना अतीचार है, और उन विषयोंमें अतिशय आसक्त हो जाना, निरर्गल हो जाना अनाचार है।

यदर्थमात्रापदवाक्यहीनं, मया प्रमादाद्यदि किंचनोक्तम्।
तन्मे क्षमित्वाविदधातुदेवी, सरस्वती केवलबोधलब्धि।।१०।।

अर्थ- यदि मैंने प्रमादसे अर्थ, मात्रा पद और वाक्यसे कमती बढ़ती कोई भी वचन कहा हो तो उसे सरस्वतीदेवी अर्थात् जिनवाणी माँ क्षमा करें। मुझे केवलज्ञानकी प्राप्ति करावें।

बोधि: समाधि: परिणामशुद्धि: स्वात्मोपलब्धि: शिवसौख्यसिद्धि
चिंतामणि चिन्ततवस्तुदाने,त्वां वन्द्यमानस्य ममास्तु देवि।।११।।

अर्थ- हे देवी! इच्छित पदार्थके दान करनेके लिये तु चिन्तामणि रत्नत्रयरुप बोधि, आत्मलीनतारुप समाधि, परिणामोंकी शुद्धता और अपने आत्मस्वरुपका लाभ तथा मोक्षसुखकी सिद्ध होवे।

य: स्मर्यते सर्वमुनीन्द्रवृन्दै य:स्तूयते सर्वनरामरेन्दै:।
यो गीयते वेदपुराणशास्त्रै, सदेवदेवो हृदये ममास्ताम्।।१२।।

अर्थ- जिस परमात्माको सर्व मुनीन्द्रोंके समूह स्मरण करते है, जिसकी सर्व चक्रवर्ती और इन्द्र स्तुति करते हैं तथा जिसकी महिमा द्वादशांगरुप वेद महापुराण और शास्त्रोंमें गाई है वह देवादिदेव मेरे हृदयमें आ विराजमान होवें।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यो दर्शनज्ञानसुखस्वभाव:, समस्तसंसारविकारबाह्य:।
समाधिगम्य: परमात्मसंज्ञ, सदेवदेवोहृदयेममास्ताम्।।१३।।

अर्थ- जो अनंत दर्शन, अनंत ज्ञान और अनंत सुखरुप स्वभावका धारी है, जो समस्त संसारके विकारी परिणामोंसे बाहिर है, जो अभेद रत्नत्रयरुप, निर्विकल्प समाधि(ध्यानकी निश्चलता) के द्वारा अनुभव करने योग्य है, तथा जिसका नाम परमात्मा अर्थात् उत्कृष्ट आत्मा है , वह देवाधिदेव मेरे हृदयमें विराजमान होवे।

निषूदते यो भव दु:खजालम् निरीक्षते यो जगदन्तरालम्।
योऽन्तगतोयोगिनिरीक्षणीय:, स देवदेवो हृदये ममास्ताम्।।१४।।

अर्थ- जो संसारके दुखोंके समूहको विध्वंस करता हैं इस जगत के भीतरकी सर्व वस्तुओंको देखता है, जो अंतरंगमें प्राप्त है और योगियों द्वारा देखने योग्य है, वह देवोंका देव मेरे हृदयमें विराजमान होवे।

विमुक्तिमार्ग प्रतिपादको यो, यो जन्ममृत्युर्व्यसनाद्यतीत:।
त्रिलोकलोकी विकलोऽकलंक:,सदेवदेवोहृदयेममास्तां।।१५।।

अर्थ- जो मोक्षमार्गको बतलानेवाला है। जो जन्म-मरण आपत्तियोंसे दूर है, जो तीन लोकको देखनेवाला, शरीर रहित और कलंकोसे रहित है, वह देवाधिदेव मेरे हृदयमें विराजमान होवे।

क्रोडीकृताशेषशरीरिवर्गा:, रागादयो यस्य न सन्ति दोषा।
निरिद्रिंयोज्ञानमयोऽनपाय: सदेवदेवोहृदयेममास्तां।।१६।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ- समस्त प्राणियोंने जिन्हें क्रोडीकृत कर लिया है-अर्थात् अपना लिया है, ऐसे रागादि दोष जिसके नहीं है, जो पांच इन्द्रियोंसे तथा मनसे रहित, ज्ञानमय और अविनाशी है, वह देवोंका देव मेरे हृदयमें विराजमान होवे।

यो व्यापको विश्वजनीनवृत्ते: सिद्धो विबुद्धो धुतकर्मबंध:।
ध्यातो धुनीते सकलं विकारं, स देवदेवो हृदये ममास्ताम्।।१७।।

अर्थ- जो सम्पूर्ण जगतके पदार्थोंमें अपनी ज्ञानकी अपेक्षा व्यापक है, जो सिद्ध है, वृद्ध है और कर्मबंधोंको जिसने नष्ट कर डाला है, तथा जिसका भव्य जीव ध्यान करते हैं और जो सम्पूर्ण विकारोंको दूर कर देता है, वह देवोंका देव मेरें हृदयमें विराजमान होवे।

न स्पृश्यते कर्मकलङ्कदोषै:, यो ध्वांत संघैरिव तिग्मरश्मि:।
निरंजनं नित्यमनेकमेकं तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये।।१८।।

अर्थ- जो परमात्मा कर्मकलंकरुपी दोषोंसे उसी तरह स्पर्श नहीं किया जाता है कि जिस तरह सूर्यके किरणोंका समूह अन्धकारके समूहसे स्पर्श नहीं किया जाता। जो परमात्मा कर्मरुपी अंजनसे रहित, वस्तु अपेक्षा नित्य, पर्याय वा गुणोंकी अपेक्षा अनेक और द्रव्य अपेक्षा एक है, उस आप्त देवकी शरणमें जाता हूँ।

विभासते यत्र मरीचिमाली, न विद्यमाने भुवनावभासि।
स्वात्म स्थितं बोधिमय प्रकाशं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये।।१९।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ- जिसमें लौकिक सूर्यके न रहते हुए भी तीन लोकको प्रकट करनेवाला ज्ञानसूर्य प्रकाशमान हो रहा हैं, और जो निश्चय नयसे अपने आत्मा में ही स्थिर है, ऐसे आप्तदेवकी शरणमें मैं जाता हूँ।

विलोक्यमाने सति यत्र विश्वं विलोक्यते स्पष्टमिदं विविक्तं।
शुद्धं शिवं शांतमनाद्यनन्तं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये।।२०।।

अर्थ- जिनके ज्ञानमें देखनेसे जगतके हरएक पदार्थ अलग अलग साफ दिखलाई देते हैं, ऐसा शुद्ध कल्याणरुप शांत तथा आदि और अन्तसे रहित जो आप्तदेव हैं, मैं उसको शरणमें जाता हूँ।

येन क्षता मन्मथमानमूर्छा विषादनिद्राभयशोकचिंता:।
क्षयोऽनलेनेव तरुप्रपंचस्, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये।।२१।।

अर्थ- जिसने काम, मान, मूर्छा विषाद, निद्रा, भय शोक और चिन्ता को इस तरह क्षय कर डाला है जैसे अग्नि वृक्षोंके समूहको भस्म कर डालती है, उस आप्तदेवकी शरणमें मैं जाता हूँ।

न संस्तरोऽस्मा न तृण न मेदिनी, विधानतो नो फलको विनिर्भित: ।
यतो निरस्ताक्षकषयविद्रुष:, सुधिभिरात्मैव सुनिर्मलो मत:।।२२।।

अर्थ- सामायिकके लिये विधानसे न तो शिलाको संस्तर (आसन) माना है, और न घास, पृथ्वी और लकडीकी चौकी आदिको। विद्वानोंने उस निर्मल आत्माको ही आसन माना है, जिसने इन्द्रिय और कषायरुप शत्रु नष्ट कर दिये है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

न संस्तरो भद्रसमाधिसाधनं, न लोकपूजा न च संघमेलनम्।
यतस्ततोऽध्यात्मरतो भवानिशम्, विमुच्यसर्वामपि बाह्यवासनाम्।।२३।।

अर्थ- हे भद्र! वास्तवमें समाधिका वा सामायिक का साधन न संथरा है, न लोगोंकी पूजा है और न चारों संघकी संगति है। इसलिये तू सारी बाहिरी वासनाओंको छोड़कर निरन्तर आत्मा में लवलीन रहना।

न संति बाह्य मम केचनार्था, भवामि तेषां न कदाचनाहम्
इत्थं विनिश्चित्य विमुच्य बाह्यं, स्वस्थं सदा त्वं भवभद्रमुक्तयै।।२४।।

अर्थ-मेरे आत्मासे बाहर जो काई भी पदार्थ हैं वे मेरे नहीं है, न मैं कभी उनका हो सकता हूँ, ऐसा निश्चय ठानके हे भाई! तू बाहरी बातों का त्यागकर मुक्त होनेके लिये हमेशा ही अपने आत्मिक स्वभाव में स्थिर हो।

आत्मानमात्मन्यविलोक्यमास्तवं दर्शनज्ञानमयो विशुद्धः।
एकाग्रचितः खलु यत्र तत्र स्थितोपिसाधुर्लभते समाधिम्।।२५।।

अर्थ- तू अपनेंमे आपको देखनेवाला, दर्शन ज्ञानमय और विशुद्ध हैं। जहां कहीं कोई साधु अपने मनको एकरुप करके ध्यानसे स्थिर हो जाता है, वही समाधि , अर्थात् समताभावको प्राप्त करता है।

एकः सदा शाश्वतिको ममात्मा, विनिर्मलः साधिगमस्वभावः।
बहिर्भवा सन्त्यपरे समृध्दाः, न शाश्वताः कर्मभवाः स्वकीयाः।।२६।।

अर्थ- मेरा आत्मा सदा ही एक, अविनाशी, निर्मल और केवलज्ञान स्वभाव है। मेरे आत्मामें बाहर रहनेवाले संपूर्ण पदार्थ अपने

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उपादान कारणसे कर्मो के निमित्तसे हुए हैं तथा ये अविनाशी नहीं हैं-उनकी अवस्था बदलनेवाली है।

यस्यास्ति नैक्यं वपुषापि सार्द्धं,तस्यास्ति किं पुत्रकलत्रमित्रै।
पृथक्कृते चर्मणि रोमकूपा:,कुतो हि तिष्ठन्ति शरीरमध्ये।।२७।।

अर्थ- जिसकी एकता शरीरके साथ भी है, उस आत्माके साथी पुत्र, स्त्री और मित्र आदि कैसे हो सकते है। यदि शरीरके उपर से चमडा दूर कर दिया जाय, तो रोमोके छेद उसमें कैसे ठहर सकते हैं, क्योंकि वे छेद चमड़े के ही आश्रित हैं।

संयोगतो दु:खमनेकभेदं यतोऽश्नुते जन्मवने शरीरी।
ततस्त्रिधासौ परिवर्जनीयो, यियासुनानिर्वृतिमात्मनीनां।।२८।।

अर्थ- संसाररुपी वनमें यह जीव बाह्य पदार्थोंके उपयोगसे नाना प्रकारके दु:ख भोगता है। इसलिये जो अपनी मुक्ति चाहता है, उसे इस संयोगको मन वचन काय पूर्वक देना चाहिये।

सर्व निराकृत्य विकल्पजालं, संसारकांतारनिपातहेतुम्।
विविक्तमात्मानमवेक्ष्यमाणो, निलीयसे त्वं परमात्मतत्त्वे।।२९।।

अर्थ- संसाररुपी वनमें डुलानेवाले ऐसे सर्व विकल्प जालोंको हटा करके तु अपने आत्माको सबसे जुदा देखता हुआ परमात्म तत्वके विचारमें लीन हो।

स्वयं कृतं कर्म यदात्मना पुरा, फलम् तदीयं लभते शुभाशुभम्।
परेण दत्तं यदि लभ्यते स्फुटं,स्वयं कृतं कर्म निरर्थकं तदा।।३०।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ- पूर्वकालमें आत्मा जो कुछ काम करता है। उसको ही शुभ व अशुभ फल पाता है। यदि दूसरेका दिया हुआ फल प्राप्त हुआ करे तो यह प्रगट है कि अपना किया हुआ कर्म बेमतलब हो जावे।

निजार्जितं कर्म विहाय देहिनो, न कोपि कस्यापि ददाति किंचन।
विचारयन्नेव मनन्यमानस:परो ददातीति विमुच्च शेमुषीम्।।३१।।

अर्थ- संसारी जीव आने ही बांधे हुए कर्मोंके फल पाते है, इसके सिवाय और कोई किसीको भी कुछ नहीं देता है। ऐसा ही विचार करते हुए 'दुसरा देता है' ऐसी बुद्धिको त्यागकर एकाग्र चित्त होना योग्य है।

यै परमात्माऽमितगतिवन्द्य, सर्व विविक्तो भृशामनवद्य:।
शश्वदधीते मनसि लभन्ते, मुक्तिनिकेतं विभववरं ते।।३२।।

अर्थ- जो भव्यजीव अमितगति अर्थात् अपार ज्ञानवाले गणधरादियोंसे अथवा अमितगति आचार्यसे(ग्रंथकर्तासे)वन्दनीक, सर्व से अलग और अतिशय करके प्रसंशनीय परमात्माको अपने मनमें ध्याते हैं वे जीव मोक्षकी श्रेष्ठ लक्ष्मीको पाते है।

इति द्वात्रिंशतिवृत्तै: परमात्मानमीक्षते।
योऽनन्यगतचेतस्को, यात्मसौ पदमव्ययम्।।३३।।

अर्थ - जो भव्यजीव उपर कहे हुए ३२ श्लोकों द्वारा एकचित्त हो परमात्माका अनुभव करता है, वह जीव अविनाशी पदको प्राप्त करता है।

।।इति सासायिक पाठ सम्पूर्णम्।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सामायिक पाठ - भाषा

(श्री पं. महाचन्द्रजी कृत)

१- प्रतिक्रमण कर्म

काल अनन्त भ्रम्यो जगमें सहिये दुःख भारी।
जन्म मरण नित किये पापको है अधिकारी।।
कोटि भवांतर माहि मिलन दुर्लभ सामायिक।
धन्य आज मैं भयो योग मिलियो सुख दायक।।१।।
हे सर्वज्ञ जिनेश! किये जे पाप जु मैं अब।
ते सब मन-वच-काय-योगकी गुप्ति विना लभ।।
आप समीप हजूर माहिं मैं खडो खडो सब।
दोष कहुँ सो सुनो करो नठ दुःख देहिं जब।।२।।
क्रोध मान मद लोभ मोह माया वशि प्राणी।
दुःख सहित जे किये दया तिनकी नहिं आनी।।
बीना प्रयोजन एकेन्द्रिय वि ति चउ पंचेन्द्रिय।
आप प्रसादहिं मिटै दोष जो लाग्यो मोहि जिय ।।३।।
आपसमें इक ठौर थापिकरि जे दुःख दीने।
पेलि दिये पग तलें दाबकरि प्राण हरीने।।
आप जगतके जीव जिते तिन सबके नायक।
अरज करु मैं सुनो दोष मेटो दुःख दायक।।४।।
अंजन आदिक चोर महा घन घोर पाप मय।
तिनके जे अपराध भये ते क्षमा क्षमा।
मेरे जे अब दोष भये ते क्षमा दयानिधि ।
यह पडिकोणो कियो आदि षटकर्म माहिं विधि।।५।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२ - प्रत्याख्यान कर्म

जो प्रमाद वशि होय विराधे जीव घनेरे।
तिनके जो अपराध भयो मेरे अघ ढेरे।।
सो सब झुठों होउ जगतपतिके परसादै।
जो प्रसाद तैं मिलै सर्व सुख दुःख न लाघै।।६।।
मैं पापी निर्लज्ज दया करि हीन महा शठ।
किये पाप अति घोर पाप मति होय चित्त दुठ।।
निंदूं हुँ मैं बार बार निज जियको गरहूँ।
सब विधि उपाय पाय फिर पापहि करहूँ।।७।।
दुर्लभ है नर जन्म तथा श्रावण कुल भारी।
सत संगति संयोग धर्म जिन श्रध्दा धारी।।
जिन वचनामृत धार समावर्त जिनवानी।
तो हू जीव संहारे धिक धिक धिक हम जानी।।८।।
इन्द्रिय लम्पट होय खोय निज ज्ञान जमा सब।
अज्ञानी जिमि करे तिसि विधि हिंसक ह्वै अब।।
गमनागमन करंतो जीव विराधे भोले।
ते सब दोष किये निंदूं अब मन वच तन तोले।।९।।
आलोचन विधि थकी दोष लागे जु घनेरे ।
तेरे सब दोष विनाश होउ तुम तें जिन मेरे।।
बार बार इस भांति मोह मद दोष कुटिलता।
इर्षादिक ते भये, निंदिये जे भय भीता।।१०।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

३ - सामायिक कर्म

सब जीवनमें मेरे समता भाव जग्यो है।
सब जिय मो सम समता राखो भाव लग्यो है।।
आर्त रौद्र द्वय ध्यान छांडि करहूँ सामायिक।
संजम मो कब शुद्ध होय यह भाव बधायक।।११।।
पृथ्वी जल अरु अग्नि वायु चउ काय वनस्पति।
पंचहि थावर माहिं तथा त्रस जीव बसै जित।।
बे इन्द्रिय तिय चउ पंचेन्द्रिय मांहि जीव सब।
तिनतें क्षमा कराऊं मुझ पर क्षमा करों अब।।१२।।
इस अवसर में मेरे सब सम कंचन अरु तृण।
महल मसान समान शत्रु अरु मित्रहिं सम गण।।
जामन मरण समान जानि हम समता कीनी।
सामायिकका काल जितै यह भाव नवीन।।१३।।
मेरो है इक आतम तामें ममत जु कीनों।
और सबै मम भिन्न जानि समता रस भीनों।।
मात पिता सुत बन्धु मित्र तिय आदि सबै यह।
मोतै न्यारे जानि जथारथ रुप करयो गह।।१४।।
मैं अनादि जग जाल मांहि फंसि रुप न जाण्यो।
एकेन्द्रिय दे आदि जन्तुको प्राण हराण्यो।।
ते सब जीव समूह सुनो मेरी यह अरजी।
भव-भवको अपराध क्षमा कीज्यो कर मरजी।।१५।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

४ - स्तवन कर्म

नमो ऋषभ जिनदेव अजित जिन जीति कर्मको।
सम्भव भव दुख हरण करण अभिनन्दन शर्मको।
सुमति सुमति दातार तार भव सिंधु पार कर।
पद्मप्रभ पद्माभ भानि भव भीति प्रीति धर।।१६।।
श्री सुपार्श्व कृत पास नाश भव जास शुद्ध कर।
श्री चन्द्रप्रभ चन्द्रकांति सम देह कान्ति धर।।
पुष्पदन्त दति दोंष कोष भवि पोष रोष हर।
शीतल शीतल करण हरण भव ताप दोष हर।।१७।।
श्रेय रुप जिन श्रेय ध्येय नित सेय भव्य जन।
वासुपुज्य शत पूज्य वासवादिक भव भय हन।।
विमल विमल मति देन अन्तगत है अनन्त जिन।
धर्म शर्म शिव करण शांति जिन शांति विधायिन।।१८।।
कुन्थु कुन्थु मुख जीव पाल अरनाथ जाल हर।
मल्लि मल्ल सम मोह मल्ल मारन प्रचार धर।।
मुनिसुव्रत व्रत करण नमत संर संघहिं नमि जिन।
नेमिनाथ जिन नेमि धर्म रथ माहिं ज्ञान धन।।१९।।
पार्श्वनाथ जिन नेमि पार्श्व उपल सम मोक्ष रमापति।
वर्द्धमान जिन नमूं नमूं भव दुःख कर्म कृत।
या विधि मैं जिन संघ रुप चउबीस संख्सधर।
स्तवूं नमूं हूं बार बार बंदू शिव सुखकर।।२०।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

५ - वन्दना कर्म

वंदूं मैं जिनवीर धीर महावीर सु सनमति।
वर्द्धमान अतिवीर वंदि हूँ मन वच तन कृत।।
त्रिशाला तनुज महेश धीश विद्यापति वन्दूं।
वंदू नित प्रति कनक रुप तनु पाप निकन्दूं।।२१।।
सिद्धारथ नृप नन्द द्वन्द दुख दोष मिटावन।
दुरित दवानल ज्वलित ज्वाल जत जीव उधारन।।
कुण्डलपुर करि जन्म जगत जित आनन्द कारन।
वर्ष बहत्तर आयु पाय सब ही दुःख टारन।।२२।।
सप्त हस्त तनु तुंग भंग कृत जन्म-मरण भय।
बाल ब्रह्म मय ज्ञेय हेय आदेय ज्ञान मय।।
दे उपदेश उधारि तारि भव सिंधु जीव धन।
आप बसे शिव मांहि ताहि बंदो मन वच तन।।२३।।
जाके वंदन थकी दोष दुःख दूर हि जावें।
जाके वंदन थकी मक्ति तिय सन्मुख आवें।।
जाके वंदन थकी वंद्य होवें सुरगनके।
ऐसे वीर जिनेश वंदि हूँ क्रम युग तिनके।।२४।।
सामायिक षट् कर्म मांहिं वंदन यह पंचम।
वंदो वीर जिनेन्द्र इन्द्र शत वंद्य वंद्य मम।।
जन्म मरण भय हरो करो अघ शांति शांति मय।
मैं अघकोष सुपोष दोषको दोष विनाशाय।।२५।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

६ - कायोत्सर्ग कर्म

कायोत्सर्ग विधान करुं अन्तिम सुखदाई।
काय त्यजन मय होय काय सबको दुखदाई।।
पूरब दक्षिण नमूं दिशा पश्चिम उत्तर में।
जिन गृह वन्दन करुं हरुं भव पाप तिमिर में।।२६।।
शिरोनति में करुं नमूं मस्तक कर धरिकै।
आवर्तादिक क्रिया करुं मन वच मद हरिकै।।
तीनलोक जिन भवन मांहि तिन है जु अकृत्रिम।
कृत्रिम है द्वय अर्द्ध द्वीप मांहीं वन्दों जिम।।२७।।
आठ कोड़ि परि छप्पन्न लाख जु सहस सत्याणूं।
च्यारि शतक पर अस्सी एक जिन मंदिर जाणूं।।
जिन गृह वंदन करुं हरहुँ मम पाप संघ कर।।२८।।
सामायिक सम नाहिं और कोउ वैर मिटायक ।
सामायिक सम नाहिं और कोउ मैत्री दायक।।
श्रावक अणुव्रत आदि अन्त सप्तम गुणथानक ।
यह आवश्यक किये होय निश्चय दु:ख हानक ।।२९।।
जे भवि आतम काज करण उद्यम के धारी।
ते सब काज विहाय करो सामायिक सारी।।
राग दोष कद मोह क्रोध लोभादिक जे सब।
बुध 'महाचन्द्र' विलाय जायतातैं किज्यो अब।।३०।।

। इति सामायिक पाठ समाप्तं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वन्दना जकडी !

आदि तीर्थंकर प्रथम ही वन्दू, वर्धमान गुण गाउंजी।
अजित आदि पारस जिनवरलो, वीस दोय मन ल्याऊंजी ।।
सीमंधर आदिक तीर्थंकर, विदेह क्षेत्रके मांहीजी।
सकल तीर्थंकर गुणगण गाऊं, व्यहरमान मन लाऊंजी।।
भूत भविष्यत वर्तमान संघ, तीस चौविसी वन्दूजी।
जिन प्रतिमा जिन मन्दिर वन्दू, जैनधर्मको वन्दूजी।।
गुरु गौतम शारद मन ल्याऊं, तीरथ सब चित्त ध्याऊंजी।
पंच परमपद नित ही समरुं, रत्नत्रय मन लाऊंजी ।।
जम्बूद्वीप मनोहर सोहे, लक्ष योजन विस्तारोजी।
मध्य सुदर्शन मेरु विराजे, विजय अचल तहां मानुजी।।
मन्दिर विद्युनमाली सोहे, अस्सी चैत्यालय वन्दूजी।
कोस बत्तीस कैलास विराजे, रिखबदेव निर्वाणुजी।।
शिखर देशके मध्य विराजे, सम्मेदाचल वन्दूजी।
कर्मकाट निर्वाण पहोंच्या, वीस जिनेश्वर वन्दूजी।।
वासु पूज्य चम्पापुर वन्दू, पावापुर महावीरजी।
नेमनाथ गिरनारी वन्दू, कौड़ि बहतर मुनिवरजी।
मांगीतुङ्गी शिखर विराजे, मुनिवर कौडि निन्याणुंजी।
गजपंथा शत्रुंजय वन्दू, कौडि शिला तारंगाजी।।
भुवनागिर सोनागिर वन्दू, पावागिरि फुनि वन्दूजी।
आबू गिर चैत्यालय वन्दू, चूलगिरि फूनि वन्दूजी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अन्तरीक्ष पारस मन ध्याउं, रामगिरि शांतिनाथोजी।
रेवा नदी चेलना वन्दू, द्रोणागिरि फुनि वन्दूजी।।
कुल भूषण देश भूषण वन्दू, जम्बूस्वामी वन्दूजी।
जहां जहां मुक्ति गये जिनश्वर, सिद्धेक्षेत्र सब वन्दूजी।।
जम्बूशाल्मलि वृक्ष ही वन्दू, चैत्यवृक्ष सब वन्दूजी।
रजतगिरि कुलाचल वन्दू, कंचनगिरि सब वन्दूजी।।
वख्यारगिरि इक्ष्वागिरि वन्दू, गददंता गिरि वन्दूजी।
रुचकगिरि कुण्डलगिरि वन्दू, मान्यखेटगिरि वन्दूजी।।
अंजनगिरि दधिगिरि सब वन्दू, नन्दीश्वर जिन वन्दूजी।
भूतानागत वर्तमान सब, चैत्य चैत्यालय वन्दूजी।।
अकृत्रिम चैत्यालय वन्दू, मध्यलोकके मांहीजी।
जहां जहां बिम्ब विराजे जिनके वन्दू मन वच कायाजी।
रीखवदेव अरु गौतम वन्दू, माणिक्य स्वामी वन्दूजी।
पाली शांति जिनेश्वर वन्दू, गोपाचल जिन वन्दूजी।।
अमीजरा श्री पारस वन्दू, तालनपुर महावीराजी।
जामनेर आदिश्वर वन्दू, चिंतामणि उज्जैनीजी।।
पाटण मुनिसुव्रत जिन वन्दू, सेठ सुदर्शन पटनाकों।
कर्मकाट निर्वाण पहुँच्या , तिन वन्दौं अघ कटनाको।।
मक्षीपार्श्व जिनेश्वर वन्दू, कुण्डलपुर मनमानोजी।
उदयापुर चैत्यालय वन्दू, सोनापुरी एक जुहारीजी।।
अंकलेश्वर आलेश्वर वन्दू, विघनहरण कचनेराजी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जलददेव श्री गोमट वन्दू, सवापांसचे डण्डोजी।।
विपुलाचल कपलैश्वर वन्दू, चन्द्रपुरी अरु काशीजी।
कोशांबी काकंदीपुरको, हस्तिनापुर वन्दूजी।।
सिंहपुरी कदलीपुर वन्दू, और वन्दू अयोध्याजी।
जन्म पाय केवलपद पायो भविजनको संबोध्योंजी।।
शौरीपुर बंटेश्वर वन्दू, द्वारावति फुनि वन्दूजी।
पोदनपुर बाहुबलि वन्दू, पंचकल्याणक वन्दूजी।।
कल्पवासी सब अहमिंदर, अरु जोतिष पंच प्रकारोजी।
भवनवासी चैत्यालय वन्दू, व्यंतर अष्ट प्रकारोजी।।
पूरव दक्षिण पश्चिम उत्तर, दिशा विदिशा मांहाजी।
तीनलोक चैत्यालय वन्दू, मनवचतन शिर नाईजी।।
आठ कौडी लाख ही छप्पन, सहस सत्तावन वन्दूजी।
चारसो इक्यासी ऊपर, मनवचतन कर वन्दूजी।।
सम्यग्दर्शन ज्ञान चारण तप, मोक्षमार्ग ये राखीजी।
जैन व्रत जिनवाणी वन्दू, वीतराग जो भाखीजी।।
महापुराण पुण्याश्रवादिक, पद्मपुराणादिक वन्दूजी।
महाधवल अर जयधवल, नमि धवल ग्रंथको वन्दूजी।।
गोंमटसार त्रैल्योकसार, अमितगति आचारज वन्दूजी।
मूलाचार ग्रियाकोष नमि, श्रावकाचारको वन्दूजी।।
समयसार पंचास्तिकाय, अरु द्रव्य संग्रह वन्दूजी।
प्रवचनसार तत्वार्थ सूत्रजी, द्वादशांगमय वन्दूजी।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गोवरधन नमि भद्रवाहू नमि, उमास्वामि वन्दूजी।
नेमिचन्द कुन्दकुन्दाचार्य,जिनसेनादिक वन्दूजी।।
अन्तर बाह्य कांड परिग्रह, निर्ग्रंथ तप लीनोजी।
वन्दू साधु दिगम्बर पदको, नमस्कार हम कीनोजी।।
अरहन्त सिद्ध आयरिय उवझाया, साधू सकलपदवन्दूजी
जो सुमिरया सो भवदधि तरिया, मेटोकर्मका फन्दोजी।।
नगर'मोरा' से जकडी कीनी, सकल भवि मन भावेजी।
दास'बिहारी' विनती गावे, नाम लेत सुख पावेजी।।
मन वच सुने पढ़े चित्त लावे, तीरथ्थको, फल पावेजी।
भूलचूक होय शुद्धकरि बुधजन, मोपे क्षमा करावेजी।।

सवैया

साधूपूजाते हजारगुणा फल जिन पूजा।,
जिनपूजाते हजारगुणा फल पूजा सिद्धकी।।
सिद्धते हजारगुणा फल पूजा प्रतिमाकी।
तिहुं बलदाता अष्ट सिद्धि नवनिद्धिकी।।
शान्त मुद्रा देव साधू अरहन्त सिद्ध भये।
प्रतिमा ही करत है पांचो पद बुध्दिकी।।
कारण बखानो सिद्धि होनेका है ध्यान मोक्ष-
का है फल देतको बात स्वर्ग सिद्धि को।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

। श्री तीर्थ वन्दना ।

आदि जिनेश्वर प्रतिमा वन्दूं, वर्द्धमान गुण गाऊंजी।
सकल तीर्थंकर मुनिगण मंडित, अतीत अनागत ध्याऊंजी।।
गुरु गौतम शारद मन लाऊं, तीर्थ सकल गुण गाऊंजी।
पंच परमपद नित ही समरुं, रत्न-त्रय मन लाऊंजी।।
जम्बू द्वीप मनोहर सोंहे, लक्ष योजन परमाणुजी।
मध्य सुदर्शन मेरु बिराजे, विजय अचल तहां मानुजी।।
मन्दिर विद्युन्माली सोहे, अस्सी चैत्यालय वन्दूजी।
कोस बत्तीस कैलाश बिराजे, रिषभदेव निर्वाणोंजी।।
शिखर देशके मध्य बिराजे, सम्मेदाचल वन्दूजी।
कर्म काट निर्वाण पहुँचे, वीस जिनेश्वर वन्दूजी।।
चंपापुर वासुपूज्य वन्दू, पावापुर वर्धमानोजी।
नेमिनाथ गिरनारी वन्दू, यादव कुलके भानूजी।।
कोडी बहत्तर मुनीशवर वन्दू, सातसे फणीधर वन्दूजी।
मांगीतुङ्गी शिखर बिराजे, मुनिवर क्रोड निन्याणुजी।।
गजपन्था शत्रुंजय वन्दू, कोटि शिला तारंगाजी।
मुक्तागिरि सोनागिरि वन्दू, पावागढ़ पुनि वन्दूजी।।
आबूगढ़ चैत्यालय वन्दू, अतिशय तीर्थ बडवाणीजी।
अन्तरीक्ष पारस मन वन्दू रामटेक शांतिनाथजी।।
रेवानदी सिद्ध अनन्ता, सिद्धक्षेत्र मुनि वन्दूजी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रिषभदेव अरु गोमट वन्दू, माणिक स्वामी वन्दूजी।।
पाली शांति जिनेश्वर वन्दू, गोपाचल जिनराजजी।
आबूगढ़ श्री पारस वन्दू, सारङ्गपुर महावीरजी।।
जामनेर आदिश्वर वन्दू, चिन्तामणी उज्जैनीजी।
रिषभदेव बावन गज वन्दू, राजगिरी गढ़ जाऊंजी।।
तेरा महावीर स्वामी वन्दू, समवशरण जिन ठानूंजी।
उदयगिरि चैत्यालय वन्दू, सोमपुरी जिनराजजी।।
अङ्कलेश्वर ऐरोडा वन्दू, विघ्नहरण कचनेराजी।
जलद देव श्री गोमट वन्दू, सवापांचसें दण्डीजी।।
नन्दीश्वर कुन्थलगिरि वन्दू, जन्मकल्याणक काशीजी।
सिंघपुरी पेठेश्वर वन्दू, द्वारावती पुनि वन्दूजी।।
कल्पवासी चैत्यालय वन्दू, व्यंतरवासी पुनि वन्दूजी।।
भवनवासी चैत्यालय वन्दू, ज्योतिषवासी पुनि वन्दुजी।।
पातालवासी चैत्यालय वन्दू, वन्दू पंच प्रकारेजी।
वीस व्यवर चैत्यालय वन्दू, वन्दू तीस चौवीसीजी।।
तीनलोक चैत्यालय वन्दू, अधो मध्य उर्ध्वलोक पुनि वन्दूजी।
अकृत्रिम कृत्रिम चैत्यालय वन्दू, भाव सहित पुनि वन्दूजी।।
चारदिशा चैत्यालय वन्दू, पूर्वपश्चिम उत्तरदक्षिण पुनिवन्दूजी।
आठ दिशा चाम्याजय वन्दू, दिशा विदिशा पुनि वन्दुजी।।
दोय दिशा चैत्यालय वन्दू, भोगभूमि कर्मभूमि पुनिवन्दूजी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१५ भोगभूमि चैत्यालय वन्दू,

पंद्रह भोगभूमिचैत्यालय वन्दू,भरत ऐरावत विदेह क्षेत्र पुनि वन्दूजी।।
जम्बूद्वीप चैत्यालय वन्दू, अर्घ दोय द्वीप पुनि वन्दूजी।
एक द्वीप चैत्यालय वन्दू, भाव सहित पुनि वन्दूजी।।
तेरह चैत्यालय वन्दू, भाव सहित पुनि वन्दूजी।
नन्दीश्वर बावन चैत्यालय वन्दू, मनवचकाय पूनि वन्दूजी।।
हरेक दिशा चैत्यालय तेरह, भाव सहित पुनि वन्दूजी।
अंजनगिरि चैत्यालय वन्दू, दधिमुख पुनि वन्दूजी।।
रतिकर पर्वत्त चैत्यालय वन्दू, मनवचकाय नुनि वन्दूजी।
एवानंदीश्वर बावन चैत्यालय वन्द चतुमुर्ख चार दिशा पुनि वन्दूजी।।
हरएक मंदिर प्रतिमा वन्दू एकसो आठ प्रतिमा भावसहित पुनि वन्दूजी।
हरएक प्रतिमा पांचसे धनुष, रत्नमयी पुनि वन्दूजी।
अरहन्त सिद्ध प्रतिमा वन्दू, भाव सहित पुनि वन्दुजी।
तीन कटनी पर प्रतिमा वन्दू, भाव सहित पुनि वन्दुजी।
चार अंगुल अधर प्रतिमा वन्दू, भाव सहित पुनि वन्दुजी।
एक शिलासे अनंत शिला वन्दू, भाव सहित पुनि वन्दुजी।
एक सिद्धसे अनंत सिद्ध वन्दू, भाव सहित पुनि वन्दुजी।
कुण्डलादिक क्षेत्र वन्दू, मनवच काय नुनि वन्दुजी।।
रतिकर गिरि क्षेत्र वन्दू, भाव सहित पुनि वन्दुजी।
जम्बूद्वीपमें एकसो सत्तर क्षेत्र वन्दू, भाव सहित पुनि वन्दूजी।।
मध्यलोकमें ४५८ जिन मंदिर वन्दू, भावसहित पुनिवन्दूजी।
गङ्गा सिंधु उत्तर दिशासे दक्षिण दिशा तक दोई तट।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

५६०००,५६०००जिन मन्दिर वन्दू, भाव सहित पुनि वन्दूंजी।
गङ्गानदी पूर्व दिशा से पश्चिम दिशा २८०००,२८००।।
जिन मन्दिर वन्दू, भाव सहित पुनि वन्दूजी।
तारात्तंबोलमें ७०० जिन मंदिर वंदूं, भावसहितपुनिवंदूंजी।
तारात्तंबोलमेंजबजा २४७६४ जिनप्रतिमावंदू, भावसहितपुनिवंदूंजी।
तारात्तंबोलमेंजबजा गबलाशास्त्र वंदू, भावसहितपुनिवंदूंजी।
तारातंबोलमें जात्रा करां, मांगीतुङ्गी परवत पर।
२८-२८ हाथ ऊंची चौडी प्रतिमा, भाव सहित पुनिववन्दूजी।।
अंगुठा ऊपर श्रीफल २८ रहे, ते चरण भावसहित पुनिवंदूजी।
तारातंबोलनी जात्रा करता, सरोबर बारा कोसनो ते मध्यमें।।
शांतिनाथजी प्रतिमा ६ हाथ चौडी,
१० हाथ ऊंची ते भाव सहित पुनि वंदूजी!।
तारा तंबोलमें वर्धमान राजा राज करे तेरा चोकमें चार कोसनो
एक मन्दिर ऊंचो ते मन्दिरमें तीन चोवीस प्रतिमा पंच रतननो,
सिंहासन सोनानो, पंच रतननो ते प्रतिमा भाव सहित पुनिवन्दूजी।
कोडाकोडि मुनीश्वर वंदूं, मांगीतुंगी शिखर पुनि वंदूजी।।
अनन्तानन्त मुनिश्वर वन्दू, सम्मेदाशिखर पुनि वन्दूजी।।
धुलेव नगरमें रिषभदेव वन्दू, भाव सहित पुनि वन्दूजी।।
परतापगढमें शांतिनाथ वन्दू, तथा चिंतामणि वन्दूजी।
नरनारी जे विनंती गावे, मन वांछित फल पावेजी।।
'सकलकीर्ति" गण गुण गायों, दास 'बिहारी"
विनती गायों, मनवांछित फल पावेजी।।
सकल तीर्थनी करूं वन्दना, मोक्ष जु कारण पाऊंजी।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मेरी भावना

जिसने राग-द्वेष कामादिक, जीते सब जग जान लिया।
सब जीवों को मोक्ष मार्ग का निस्पृह हो उपदेश दिया।।
बुद्ध वीर जिन हरि हर, ब्रह्मा या उसको स्वाधीन कहो।
भक्तिभाव से प्ररित हो यह चित्त उसी मे लीन रहो।।१।।
विषयोंकी आशा नहीं जिनके, साम्यभाव धन रहते हैं।
निजपरके हित साधनमें जो, निश-दिन तत्पर रहते हैं।।
स्वार्थ त्याग की कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते हैं ।।
ऐसे ज्ञानी साधु जगतके दुख समूहको हरते हैं।।२।।
रहे सदा सत्संग उन्हीं का, ध्यान उन्हीं का नित्य रहे।
उन ही जैसी चर्या में यह चित्त सदा अनुरक्त रहे।।
नही सताऊं किसी जीवको झूंठ कभी नहीं कहा करुं।
पर धन-वनिता पर न लुभाऊं, संतोषामृत पिया करुं ।।३।।
अहंकार का भाव न रक्खूं, नही किसी पर क्रोध करुं।
देख दूसरो की बढ़तीको, कभी न ईर्ष्या भाव धरुं।
रहे भावना ऐसी मेरी सरल-सत्य-व्यवहार करुं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बने जहां तक इस जीवन में, औरों का उपकार करूं।।४।।
मैत्री भाव जगत में मेरा, सब जीवों से नित्य रहे।
दीन-दुखी जीवों पर मेरे, उरसे करुणा-स्त्रोत बहे।।
दुर्जन-क्रूर कुमार्ग-रतों पर क्षोभ नही मुझको आवें।
साम्यभाव रखूं मैं उन पर ऐसी परिणति हो जावें।।५।।
गुणीजनों को देख हृदय में मेरे प्रेम उमड़ आवें।
बने जहां तक उनकी सेवा करके यह मन सुख पावें।।
होऊं नही कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवें।
गुण-ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावें।।६।।
कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावें।
लाखो वर्षा तक जीऊं या मृत्यु आज ही आ जावें।।
अथवा कोई कैसा ही भय, या लालच देने आवें।
तो भी न्याय मार्ग से मेरा, कभी न पग ड़िगने पावें।।७।।
होकर सुखमें मग्न न फूले, दुखमें कभी न घबरावें।
पर्वत नदी स्मशान भयानक, अटवी से नहि भय खावे।।
रहे अडोल अकम्प निरन्तर, यह मन दृढ़तर बन जावे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इष्ट-वियोग अनिष्ट-योग में, सहनशीलता दिखलावे।।८।।
सुखी रहे सब जीव जगतके कोई कभी न घबरावें।
वैर पाप अभिमान छोड़ जग नित्य नये मंगल गावें।।
घर घर चर्चा रहे धर्म की, दुष्कृत दुष्कर हो जावे।
ज्ञानचरित उन्नत कर अपना, मनुज जन्म फल सब पावै।।९।।
ईति -भीती व्यापे नहीं जगमें, वृष्टि समय पर हुआकरे।
धर्मनिष्ठ होकर राजा भी, न्याय प्रजा का किया करे।।
रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शांतिसे जिया करे।
परम अहिंसा धर्म जगत में फैल सर्व हित किया करे।।१०।।
फैले प्रेम परस्पर जगतमें, मोह दूर ही रहा करे।
अप्रिय-कटुक-कठोर शब्द नहि कोई मुख से कहाकरे।।
बनकर सब'युगवीर' हृदय से, देशोन्नति रत रहा करे।
वस्तु स्वरुप विचारखुशीसे, सब दुःख संकट सहा करें।।११।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लघु सहस्त्रनाम स्तोत्र

नमः स्त्रैलोक्यनाथाय, सर्वज्ञाय महात्मने।
वक्ष्ये तस्यैव नामानि मोक्ष सौख्याभिलाषया।।१।।
निर्मलः शाश्वतो शुद्धो, निर्विकारो निरामयः।
निःशरीरो निरातङ्को शुद्ध सूक्ष्मो निरञ्जनः।।२।।
निष्कलङ्को निरालम्बो, निर्ममो निर्मलोत्तमः।
निर्भयो निरहंकारो निर्विकारो निरुक्तयः।।३।।
निर्दोषो निरुजः शान्तो निर्भवो निर्ममः शिवः।
निस्तरङ्गो निराकारो निःकर्मो निकलः प्रभुः।।४।।
निर्वादो निरुपज्ञानी निरागो निर्धनो जिनः।
निःशब्दो प्रतिमाश्रेष्ठो उत्कृष्टो ज्ञान-गोचरः।।५।।
निःसङ्गो प्राप्त-कैवल्यो नैष्ठिकः शब्द-वर्जितः।
अनघो महापूतात्मा जगत्-शिखर-शेखरः।।६।।
निःशब्दो गुण-सम्पन्नः पापताप-प्रणाशनः।
सोपयोगो शुभं प्राप्तः कर्मद्योत-बलावहः।।७।।
अजरो अमरो सिद्धः अर्चितो अक्षयो विभुः।
अमूर्तो अच्युतो ब्रह्मा: विष्णुरीशः प्रजापतिः।।८।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अनिंद्यो विश्वनाथश्च अजो अनुपमो भवः।
अप्रमेयो जगन्नाथः बोधरुपो जितात्मकः ।।९।।
अव्ययो सकलाराध्यो निष्पन्नो ज्ञानलोचनः।
अछेद्यो निर्मलो नित्यः सर्व-संकल्प-वर्जितः।।१०।।
अजयों: सर्वतोभद्रः निःकषायो भवान्तकः।
विश्वनाथः स्वयंबुद्ध वीतरागो जिनेश्वरः।।११।।
अन्तको सहजानन्दः आवागमना गोचरः।
असाध्यः शुद्धचैतन्यः कर्मनोकर्म-वर्जितः।।१२।।
अंतको विमलज्ञानी निष्पृहो निःप्रकाशकः।
कर्माजितो महाजेता लोकत्रय-शरोमणिः।।१३।।
अव्याबाधो वरः शम्भूः विश्ववेदी पितामहः।
सर्वभूत-हितोदेवः सर्वलोक-शरण्यकः।।१४।।
आनन्दरुप चैतन्यो भगवान् त्रिजगद्गुरुः।
अनन्तानन्तधी शक्तिस्तूताव्यक्तां व्ययात्मकः।।१५।।
अष्टकर्म-विनिर्मुक्तो सप्तधातु-विवर्जितः।
गारवादात्रयाद् दूरो सर्वानादि-संयुतः।।१६।।
अभवः प्राप्त-कैवल्यो निर्वाणो निरुपेक्षिकः।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निकल: केवलज्ञानी मुक्तिसौख्य-प्रदायक:।।१७।।
अनामयो महाराध्यो वरदो ज्ञान पावन: ।
सर्वोशाश्वत सुखावाप्त: जिनेन्द्रो मुनि-संस्तुत:।।१८।।
अणु न: परमज्ञानी विश्वतत्व-प्रकाशक:।
प्रबुद्धो भगवान्नाथ! प्रशस्ता-पुण्यकारक।।१९।।
शंकर: सुगतो रुद्र: सर्वज्ञो मदनान्तक:।
ईश्वरो भुवनधीशो सर्ववित पुरुषोत्तम:।।२०।।
सद्योजात महात्मानं विमुक्तो मुक्तिवल्लभ:।
योगीन्द्रोऽनादि संसिद्धो निरीहो ज्ञानगोचर:।।२१।।
सदाशिव: चतुर्वक्त्र: सत्य सौख्य त्रिपुरान्तक:।
त्रिनेत्रोत्रिजगत् पूज्य: अष्टमूर्ति: कल्याणक।।२२।।
सर्वसाधु जनैर्वंद्य: सर्वपाप – विवर्जित:।
सर्वदेवाधिको देव: सर्वभूत-हितङ्कर:।।२३।।
स्वयंवेद्यो महाध्यान प्रसिद्धो पापनाशन:।
चिन्मात्र: चिदानंद: चैतन्यो चैतवैभव:।।२४।।
सकलातिशयो देव: मुक्तिस्यो महतामह:।
मुक्ति कार्याय संतुष्टो निरागो परमेश्वर :।।२५।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

महादेवो महावीरो महा-मोह-विनाशकः।
महाभावो महोदासीः महामुक्ति प्रदायक।।२६।।
महाज्ञानी महायोगी महातपो महात्मकः।
महार्धिको महावीर्यो महापति पदस्थितः।।२७।।
महापूज्यो महावंद्यो महाविघ्न – विनाशकः।
महोसौख्यो महापुन्सो महामहिमह्यच्युतः।।२८।।
मुक्तामुक्तिर्निरोधो च एकानैकविनिश्चलः।
सर्वद्वन्द-विनिर्मुक्तो सर्व लोक आराधकः।।२९।।
महासूरो महाधीरो महादुःख-विनाशकः।
महामुक्तो महावीरो महाह्रदो महागुरुः।।३०।।
निर्मोही मारविध्वंसी निष्कामो विषयच्युतः।
भगवन्तो गतभ्रान्ती शान्ति कल्याणकारकः ।।३१।।
परमात्मा परमानन्द परं परम आत्मकः।
परमाजः परम तेजः परमधाम परंमहः।।३२।।
प्रसूतोऽनन्त विज्ञानः साक्षात् निर्वाण संस्तुतः।
नाकृतिनाक्षरोऽवर्णः व्योमरुपी जितात्मकः।।३३।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

व्यक्ताव्यक्त सब्दोधः संसारच्छेदकारकः।
नरवन्द्यो महाराध्यः कर्मजित धर्मनायकः।।३४।।
बोधयन् सुजगद्वन्द्यो विश्वात्मानरकान्तकः।
स्वयम्भू भव्यपूज्यात्मा पुनीतो विभवस्तुतः।।३५।।
वर्णातीतो महातीतोः रुपातीतो निरंजनः।
अनन्तज्ञान सम्पन्नः देवदेवो सनातनः।।३६।।
वरेण्य भविध्वंशी योगिनां ज्ञानगोचरः।
जन्म-मृत्यु-जरांतको सर्व विघ्नहरोसरः।।३७।।
विश्वदृक् भव्यसम्बन्ध पवित्रो गुणसारः।
प्रसन्नः परमाराध्यो लोकालोक प्रकाशकः।।३८।।
रत्नगर्भो जगत्स्वामी इन्द्रवन्द्य सुरार्चितः।
निःप्रपंचो निरातङ्को निःशेष क्लेशनाशकः।
लोकोशोलोक-संसेव्योलोकालोक-प्रकाशकः।
लोकोत्तमो नृलोकेशो लोकाग्रशिखरस्थितः।।४०।।
नामाष्टकः सहस्त्राणि ये पठन्ति पुनः पुनः।
ते निर्वाणपदं यांति मुच्यन्ते नाऽत्र संशयः।।४१।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

॥जैनम् जयतु शासनम्॥

:सौजन्य:

श्रीमान स्व. श्री धुलचंदजी केलावत
धर्मपत्नी स्व. श्री धीसीबाई केलावत
पुत्रवधु - स्व. भागवतीदेवी
की समृति में
श्री कालुलाल धुलचंदजी केलावत
पुत्रवधु - पुष्पा महावीर, रेखा मुकेश
पुत्री दामाद - अनिता रमेश जैन
पौत्र पौत्री - मनीष, हर्ष, पलक, विशाखा एवं
समस्त केलावत परिवार
निवासी - गुड़ेल, जि. उदयपूर (राज.)
हाल मुकाम - गोरेगांव (वेस्ट), मुंबई

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi